हिन्दी में
निबन्ध साहित्य

हिन्दी

में

# निबंध-साहित्य



लेखक

जनार्दनस्वरूप अग्रवाल

एम्० ए०, बी० ए० ( ऑनर्स )

साहित्यरत्न

प्रकाशक

साहित्य-भवन लिमिटेड, प्रयाग

प्रकाशक—साहित्य-भवन लिमिटेड, प्रयाग

प्रथम बार : मूल्य १।)
सं० २००२

मुद्रक—गिरिजाप्रसाद श्रीवास्तव, हिन्दी साहित्य प्रेस, प्रयाग

श्रीयुत डा० रामकुमार वर्मा
के कर-कमलों में
सादर समर्पित

जनार्दनस्वरूप अग्रवाल

# मेरे दो शब्द

गतवर्ष प्रयाग विश्वविद्यालय के अंतर्गत छात्र जीवन में मैंने 'हिन्दी में निबंध-साहित्य' पर एक प्रबंध लिखा था। उसकी सामग्री मुझे कतिपय स्थानों से इतनी उपलब्ध हो गई कि उसे एक पुस्तक का रूप दे देने की मेरी इच्छा हुई।

हिन्दी-साहित्य में उपन्यास, नाटक, कहानी का भाण्डार तो नित्य प्रति अच्छी-बुरी रचनाओं से भरता ही रहा है—उनकी माँग भी अधिकाधिक हो रही है, परन्तु उनके साथ ही उच्च कोटि के साहित्य में निबंध को भी स्थान प्राप्त है। उसकी सामग्री भी प्रचुरमात्रा में प्राप्त है, अतः एक मातृ भाषा-सेवी की दृष्टि से उक्त प्रकार का प्रयास किया गया है।

साधारण लेख एवं निबंध में अंतर स्पष्ट है। पाठक, इस पुस्तक में उक्त अन्तर को ध्यान में रखकर ही आगे बढ़ें। निबंध के प्रमुख गुण हैं—आत्मीयता और व्यक्तित्व। ये दोनों गुण निबंध की आरंभिक कल्पना से चले आ रहे हैं। प्रारंभ के निबंध लेखकों में ये गुण प्रभूत मात्रा में प्राप्त होते हैं और किसी किसी में अब भी—यथा सियाराम-शरण गुप्त, शांतिप्रिय द्विवेदी आदि। परन्तु अन्यथा अब परिस्थिति में ही नहीं, निबंध की वह प्रारंभिक कल्पना में भी परिवर्तन हो गया है। अब अधिकांश विद्वान् समालोचनात्मक एवं साहित्य संबंधी लेखों के लिखने में अपनी लेखनी की क्षमता की इतिश्री कर देते हैं। यह भिन्नता भी ध्यान देने योग्य है।

इसमें पाठकों को सामग्री का एकत्रीकरण ही अधिक मिलेगा, अतः वे इसे क्लर्क-कार्य समझकर दोषारोपण न करें। मैं सारी सामग्री को एक स्थान पर न पा सकने के कारण उसका यथोचित उपयोग भी

कम कर सका हूँ। अतः लेखकों की व्यक्तिगत विशेषताओं और शैलियों के विस्तृत एवं सूक्ष्म अन्वीक्षण की आशा से पाठक इस पुस्तक का अवगाहन न करें, प्रत्युत यदि इस सामग्री से किसी को तत्संबंधी विशेष-कार्य करने की प्रेरणा मिली तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

प्रमुख लेखकों के वर्णन के अनंतर कुछ पंक्तियाँ उनकी भाषा और शैली पर भी लिखी गई हैं, परन्तु वे नितांत अपर्याप्त हैं और कभी कभी दूसरे विद्वानों के शब्द भी हैं। जहाँ लेखकों की निबंध शैली एक से अधिक प्रकार की मिलती है, वहाँ उनकी प्रमुख तथा अधिक प्राप्त शैली का ही वर्णन है।

पाठक निबंधों के अंशों या उदाहरणों को पढ़ते समय प्रायः उपेक्षा की दृष्टि से देखा करते हैं। तदर्थ केवल यह निवेदन है कि उनको ध्यान पूर्वक पढ़ने से ही वस्तु स्थिति का सम्यक् ज्ञान होगा, साथ ही वे बहुधा मनोरंजक भी हैं, क्योंकि उनके चयन में विशेष चिंता की गई है, वे कलेवर वृद्धि के निमित्त नहीं रखे गए हैं।

मैं मौलिकता का दंभ नहीं करता, जो कुछ अच्छा-बुरा है, उसका उचित एवं उपयुक्त निर्णय पाठक ही कर सकेंगे। हाँ यदि कोई कृपालु विद्वान् अपनी सम्मति तथा परामर्श से मेरा उत्साह बढ़ायँगे, तो मैं अपने को धन्य समझूँगा।

तारा-पुस्तक-भवन
शाहजहाँपुर
रामनवमीः सं० १९९९ वि०

जनार्दनस्वरूप अग्रवाल

# विषयानुक्रमणिका


| | विषय | | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| १. | विषय प्रवेश | ... | १ |
| २. | पश्चिम से निबंध का विकास और उसकी परिभाषा | | ३ |
| ३. | हिन्दी साहित्य में निबंध की कल्पना तथा प्रारंभिक स्थिति | | ८ |
| ४. | निबंध का जन्म और भारतेन्दुकाल | ... | १३ |
| ५. | निबंध का विकास—बालकृष्ण भट्ट और हिंदी प्रदीप | | १६ |
| ६. | पं० प्रतापनारायण मिश्र तथा उनके समकालीन अन्य लेखक | | २२ |
| ७. | पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी | ... | ३० |
| ८. | द्विवेदी-काल के अन्य लेखक | ... | ३६-३९ |
| | पं० माधवप्रसाद मिश्र | ... | ३६ |
| | श्री गोपालराम गहमरी | ... | ३७ |
| | श्री बालमुकुंद गुप्त | ... | ३७ |
| | श्री गोविन्द नारायण मिश्र | ... | ३८ |
| ९. | द्विवेदी-युग के शेष लेखक | ... | ४०-४४ |
| | बा० श्याम सुंदर दास | ... | ४० |
| | पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी | ... | ४१ |
| | सरदार पूर्ण सिंह | ... | ४२ |
| | पं० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी | ... | ४२ |
| | पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी | ... | ४३ |
| १०. | आचार्य पं० रामचंद्र शुक्ल | ... | ४५ |
| ११. | अन्य आधुनिक लेखक ( जीवित ) | ... | ५१-५६ |
| | रायकृष्णदास | ... | ५१ |
| | श्री वियोगीहरि | ... | ५२ |
| | पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' | ... | ५२ |
| | डा० रघुवीर सिंह एम० ए० डी० लिट् | ... | ५३ |

| विषय | | पृष्ठ |
|---|---|---|
| प्रो० गुलाबराय | ... | ५४ |
| १२. शेष लेखक | ... | ५७-६७ |
| पदुमलाल पन्नालाल बख्शी | ... | ५७ |
| राजेन्द्रसिंह, ब्रजमोहन वर्मा | ... | ५६ |
| श्रीनाथ सिंह, पीतांबरदत्त बडथ्वाल | ... | ५६ |
| श्री सद्गुरुशरण अवस्थी, पं० नंददुलारे वाजपेयी | | ५६-६० |
| पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी, शांतिप्रिय द्विवेदी | ... | ६०-६१ |
| कालिदासकपूर, पं० रामकृष्ण शुक्ल | ... | ६२ |
| प्रभुनारायण | ... | ६२ |
| जैनेन्द्रकुमार | ... | ६२ |
| श्री सियारामशरण गुप्त | ... | ६३ |
| डा० धीरेन्द्र वर्मा | ... | ६३ |
| रामकुमार वर्मा, संतराम | ... | ६४ |
| इलाचंद जोशी, प्रभाकर माचवे | ... | ६५ |
| गणपति जानकी राम दुबे, कृष्ण बलदेव वर्मा | | ६५-६६ |
| कतिपय साधारण लेखक | ... | ६६-६७ |
| १३. लेखिकाएँ | ... | ६८-६६ |
| १४. अनुवादित निबंध साहित्य | ... | ७०-७१ |
| १५. पाठ्य पुस्तकें; "बातों के संग्रह" 'संपादित-सामग्री' | | ७२-७६ |
| १६. उपसंहार: निबंध साहित्य पर कार्य तथा अपरीक्षित सामग्री | ... | ८०-८१ |
| १७. परिशिष्ट : निबंध में अब तक प्रस्फुटित विशेष शैलियाँ | | ८२-८६ |
| १८. अकारादि क्रम से पुस्तकस्थ लेखक सूची | ... | ८७-६२ |
| १६. अकारादि क्रम से पुस्तकों की सूची | ... | ६३-६६ |

# विषय-प्रवेश

किसी समालोचक का कथन है कि निबन्ध गद्य की कसौटी है। जिस भाषा के निबन्ध जितनेही उच्च कोटि के होंगे उसके गद्य को उतनाही विकसित तथा उन्नत समझना चाहिये। भाषा, भाव, विचार तथा लेखन शैली पर निबंध के लेखक का पूर्ण आधिपत्य होना चाहिये, साथही साथ अपने विषय का विशेषज्ञ होना भी उसके लिये अनिवार्य है। इसीलिए उपन्यास, कहानी, नाटकादि सभी से कठिन होता है निबंध लिखना।

यदि हिन्दी के प्रारम्भिक साहित्य पर दृष्टि डाली जाय तो साधारण गद्य हमें १३ वीं शताब्दीं में ही राजस्थान के चारणों द्वारा लिखित 'ख्यालों' में मिलता है। किन्तु ये राजाओं की वंशावलियाँ मात्र थीं, अतः इनमें साहित्यिकता का तो नितान्त अभाव ही था। यही दशा तत्कालीन जैन धर्म ग्रन्थों की भी थी, उनमें भी जो थोड़ा बहुत गद्य मिलता है, वह साम्प्रदायिक सिद्धान्तों के खण्डन मण्डन से ही परिपूर्ण है, अतः वह हमारे काम का नहीं। इसी प्रकार हिन्दी साहित्य के मध्य-काल में जो ब्रजभाषा में कुछ गद्य की पुस्तकें, कथा कहानियाँ या अन्य धार्मिक टीका-टिप्पणियाँ लिखीं गईं, वे साहित्यिक कोटि के गद्य में ही जब स्थान पाने की अधिकारिणी नहीं, तो निबंध की परिधि से तो वे बहुत ही दूर हैं। निष्कर्षतः विक्रम की उन्नीसवीं शताब्दी के अन्ततक जब सुरुचिपूर्ण अच्छा गद्य ही नहीं प्राप्त था तो निबंध के समान प्रौढ़ गद्य-रचना की आशा ही करना व्यर्थ है।

निबंध शब्द की कल्पना वास्तव में हमारे साहित्य में अँग्रेजी राज्य स्थापित हो जाने के अनंतर से आई है। अँग्रेजी में निबंध साहित्य का

बड़ा सुन्दर भण्डार है और उसकी वृद्धि करने वाले हैं बेकन, स्टील, एडीसन, गोल्डस्मिथ, हैजलिट, कार्लाइल, रस्किन, ले हण्ट, चार्ल्स लैम्ब, वाल्टर रैले, स्टीवेन्सन, लूकस, गार्डनर आदि, जो लगभग ३५० वर्ष से अपनी अप्रतिम रचनाओं द्वारा उसे सम्पन्न करते चले आ रहे हैं। इन प्रतिनिधि तथा प्रमुख लेखकों का हिन्दी के निबंध साहित्य पर भी प्रभाव पड़ा है अतः पश्चिम में निबंध का विकास किस प्रकार हुआ, अँग्रेजी में उसकी क्या परिभाषा है, उसकी कितनी परिधि है, तथा क्या विशेषताएँ हैं,—यह संक्षेप में यहां देख लेने से हमें हिन्दी लेखकों की उत्कृष्टता तथा मौलिकता का मूल्यांकन करने में ही सुविधा नहीं होगी, प्रत्युत उनकी रचनाओं में पश्चिमीय दृष्टिकोण से निबंधत्व कितना है, यह भी सरलता से समझा जा सकेगा।

---

# पश्चिम में निबंध का विकास और उसकी परिभाषा

मिकेल मौन्टेन नामक एक फ्राँसीसी विद्वान् ने, जो निबंध का जन्मदाता माना जाता है, एक बार अपने विषय में कुछ लिखने की सोची उसने इस कार्य के लिये एक सुदूर निर्जन स्थान ढूँढ़ा—इससे मौण्टेन का अभिप्राय कदाचित यह था कि ऐसे स्थान में उसकी रचना में दूसरों के अनुभव, विचार या पुस्तकों का प्रभाव न पड़ सकेगा और वह बिलकुल अपने ही ढंग से अपने विषय में लिख सकेगा। इस प्रकार उसने कुछ लेख लिखे और उन्हें १५८० ई० में एसेइस ( Essais ) नाम से प्रकाशित किया। उपर्युक्त तिथि से पूर्व इस शब्द का प्रयोग प्रयत्न, परीक्षा या परीक्षण के अर्थ में होता था। परन्तु मौन्टेन ने अपने लेख संग्रह का एसेइस नाम रख कर पहली बार इस शब्द का प्रयोग साहित्यिक अर्थ में किया। मौण्टेन के लेखों को यद्यपि तीन शताब्दियाँ हो चुकी हैं किन्तु आज भी वे बड़े आदर के साथ पढ़े जाते हैं। उनका इतना प्रभाव पड़ा कि उनसे साहित्य के एक नवीन अंग का ही प्रादुर्भाव हो गया। यहाँ यह बताना भी अप्रासंगिक न होगा कि मौण्टेन ने उपर्युक्त पुस्तक की भूमिका में स्पष्ट लिख दिया है कि निबंध में आत्मचरित का चित्रण होना अनिवार्य है। जिस निबंध में इस तत्व का अभाव हो, वह निबंध कहाने योग्य नहीं। इसका यह तात्पर्य नहीं कि लेखक अपनी जीवनी लिखे किन्तु निबंध के विषय में यदि निबंधकार आत्मीय अनुभव का पुट देता चले तो उसकी कृति में सजीवता और मनोरंजकता अधिक आ जायगी। इसीलिए एडीसन ने लिखा है

"The most eminent egoist that ever appeared in the world was Montaine-"

अर्थात् मौन्टेन ही संसार में सर्वश्रेष्ठ आत्मवक्ता हुआ है।

निबंध की इस संक्षिप्त जन्म-कथा के अनंतर उसकी परिभाषा बड़ी महत्वपूर्ण है। डा० सैमुअल जान्सन अँग्रेजी के एक असाधारण विद्वान तथा उच्चकोटि के निबंधकार हुए हैं। उन्होंने निबंध की परिभाषा इस प्रकार दी है:—

"An essay is the sally of the mind, an irregular undigested piece, not a regular and orderly composition-"

"निबंध मानसिक जगत का एक ढीलाढाला बुद्धि विलास है, इसी लिये वह कोई क्रमिक और नियमित रचना न होकर एक अव्यवस्थित और अपरिपक्व विचार खण्ड होता है।" किन्तु आजकल जो निबंध लिखे जाते हैं वे इस पुरानी परिभाषा के अनुकूल कम ही होते हैं। इसीलिये आक्सफोर्ड अँग्रेजी कोष में एक दूसरी नवीन ही परिभाषा रखी गई है। यथा:—

"An essay is a composition of moderate length on any particular subject or branch of a subject, originally implying want of finish, but now said of a composition more or less elaborate in style though limited in range-"

"निबंध किसी विषयविशेष या किसी विषय के अंश पर एक साधारण कलेवरमयी रचना है, जिसमें प्रारंभ में अपरिपूर्णता की कल्पना रहती थी, किन्तु अब उसका प्रयोग एक ऐसी रचना के लिये किया जाता है जिसकी परिधि के सीमित रहने पर भी शैली प्रायः प्रौढ़ एवं परिमार्जित रहती है।"

इस प्रकार निबंध की परिभाषा में ही इन दो तीन सौ वर्षों में महान् अंतर हो गया है। आजकल के लेखक पुराने लेखकों से जिस बात में महत्वपूर्ण भिन्नता रखते हैं वह यही है कि ये निबंध के तर्कपूर्ण क्रमिक विकास तथा शैली की गंभीरता एवं प्रौढ़ता पर अधिक

ध्यान देते हैं,) और प्राचीन तथा प्रारंभिक लेखक शिथिलता, आत्मीयता एवं घनिष्ठता पर अधिक जोर देते थे। यहाँ पर इस 'शिथिलता' शब्द से यह भ्रम न हो जाय कि साधारण लेखकों की अपरिपुष्ट रचना कासा शैथिल्य निबंध की विशेषता है, अतः बा० श्याम सुंदर दास जी के कुछ शब्द यहाँ अविकल लिखे जाते हैं, उनसे उपर्युक्त कथन स्पष्ट हो जायगा।

("वास्तव में निबंध की शिथिल शैली अत्यधिक प्रभावशालिनी होनी चाहिए। बौद्धिक विचारों की शुष्कता और दुरूहता को दूर करने के लिए निबंध-लेखकों का यह प्रधान साधन है जिससे वे पाठकों के हृदय को अपनी ओर लगा सकें। उन्हें शैथिल्यपूर्ण हल्का वातावरण बनाना कला की दृष्टि से आवश्यक होता है।")

निबंध की सीमा या परिधि की विवेचना से भी इस शिथिलता पर पर्याप्त प्रकाश पड़ जायगा। मौन्टेन के अनुसार निबंध का एक निश्चित विषय तो अवश्य होता है "किन्तु उसके 'एसे' उस विषय की परिधि से ही घिरे नहीं रहते थे। प्रस्तुत विषय के साथ अग्रसर होते हुए उक्त विषय के संसर्ग से जो प्रासंगिक विषय सम्मुख उपस्थित हो जाते थे उनकी ओर भी मौन्टेन की लेखनी बढ़ जाती थी; इस प्रकार वह विषयांतर में भी पड़ जाता था। अनेक बार उसे एक विषयांतर से दूसरे और दूसरे से तीसरे की ओर जाते देखा जा सकता है। इससे प्रकट होता है कि मौन्टेन के लिए निबंध का विषय केवल आरंभ में लेखनी को उत्तेजित करने वाली एक प्रेरणा मात्र है और एक बार जब उसकी लेखनी चल पड़ती थी तब वह अन्य प्रेरणाओं के वशीभूत होकर आगे बढ़ती रहती थी। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि मौन्टेन की रचनाओं में निबंध की शृंखला नितांत उच्छिन्न है—उसमें विचारों का कोई तारतम्य ही नहीं। यदि ऐसा होता तब तो उसके निबंध कलात्मक पूर्णता के अभाव में साहित्य की भूमि

में पदार्पण ही न कर पाते, उन्हें विशिष्ट साहित्यिक पद प्राप्त करने का तो प्रश्न ही न होता। वास्तव में उसके 'एसे' विषय के मुख्य सूत्र को पकड़कर चलते हैं और आत्यंतिक रूप से उसका त्याग कभी नहीं करते (वह विषयांतर में अवश्य चला जाता है किन्तु वहाँ से लौटकर पुनः मुख्य विषय पर पहुँचता है। निबंध के समाप्त होने पर हम उसकी अंतर्निहित एकता का अनुभव करते हैं।" उसकी शैली आकर्षक तथा भावमय है; उसमें उसके व्यक्तित्व की अमिट छाप है।)

इस संबंध में आचार्य पं० रामचंद्र शुक्ल के कुछ वाक्य बड़े महत्वपूर्ण हैं, अतः लिखने का लोभ संवरण नहीं कर सकता। "आधुनिक पाश्चात्य लक्षणों के अनुसार निबंध उसी को कहना चाहिए जिसमें व्यक्तित्व अर्थात् व्यक्तिगत विशेषता हो। बात तो ठीक है, यदि ठीक तरह से समझी जाय। व्यक्तिगत विशेषता का यह मतलब नहीं कि उसके प्रदर्शन के लिए विचारों की शृंखला रखी ही न जाय या जान-बूझकर जगह जगह से तोड़ दी जाय, भावों की विचित्रता दिखाने के लिये ऐसी अर्थ योजना की जाय जो उनकी अनुभूति के प्रकृत या लोक-सामान्य स्वरूप से कोई संबंध ही न रखे अथवा भाषा से सरकस वालों की-सी कसरतें या हठयोगियों के-से आसन कराए जायँ जिनका लक्ष्य तमाशा दिखाने के सिवा और कुछ न हो।"

"संसार की हर एक बात और सब बातों से सम्बद्ध है। अपने अपने मानसिक संघटन के अनुसार किसी का मन किसी संबंध-सूत्र पर दौड़ता है, किसी का किसी पर। ये संबंध सूत्र एक दूसरे से नथे हुए, पत्तों के भीतर की नसों के समान, चारों ओर एक जाल के रूप में फैले हैं। तत्वचिंतक या दार्शनिक केवल अपने व्यापक सिद्धांतों के प्रतिपादन के लिये उपयोगी कुछ संबंध सूत्रों को पकड़ कर किसी ओर सीधा चलता है और बीच के ब्योरों में कहीं नहीं फँसता। पर (निबंध-लेखक अपने मन की प्रवृत्ति के अनुसार स्वच्छंद गति से इधर-

उधर फूटी हुई सूत्र-शाखाओं पर विचरता चलता है)। यही उसकी अर्थ-संबंधी व्यक्तिगत विशेषता है। अर्थ-संबंध-सूत्रों की टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ ही भिन्न-भिन्न लेखकों का दृष्टिपथ निर्दिष्ट करती हैं। एक ही बात को लेकर किसी का मन किसी संबंध-सूत्र पर दौड़ता है, किसी का किसी पर। इसी का नाम है एक ही बात को भिन्न-भिन्न दृष्टियों से देखना। व्यक्तिगत विशेषता का मूल आधार यही है।"

इसी गुण तथा कला के कारण उसके लेखों में सुहृन्मण्डली की बातचीत के सदृश मैत्री-सुलभ सहानुभूति के कारण आत्मीयता तथा व्यक्तित्व मिलते हैं। व्यक्तिगत और स्वानुभूत विचारों की नैसर्गिकता तो उनमें रहती ही है। इन्हीं तत्वों के कारण लेखक के साथ उसकी रचना द्वारा पाठक की घनिष्ठता स्थापित हो जाती है। निबंध की सब से बड़ी विशेषता, संक्षेप में, यही है।

---

# हिन्दी-साहित्य में निबंध की कल्पना और प्रारंभिक स्थिति

हिन्दी-साहित्य में निबंध शब्द का प्रयोग बड़ी असावधानता के साथ किया जाता है। "जिस प्रकार किसी उपन्यास का एक परिच्छेद या प्रकरण आख्यायिका नहीं कहा जा सकता, वरन् आख्यायिका कहलाने के लिये उसमें आख्यायिका शैली की विशेषताएँ तथा उसकी कलात्मक पूर्णता आवश्यक है, उसी प्रकार किसी दार्शनिक या साहित्यिक ग्रंथ का एक अध्याय निबंध के नाम से अभिहित नहीं हो सकता।" किन्तु हिन्दी में अभिभाषण, व्याख्यान, मासिक पत्रिकाओं के साधारण लेख, समालोचनात्मक प्रबंध—यहाँ तक कि वार्तालाप और संवाद तक को भी कभी कभी साहित्यिक सम्मान प्रदान करने की अभिलाषा से निबंध संज्ञा दे दी जाती है। परन्तु निबंध और ऐसे लेखों में अंतर है। पाश्चात्य दृष्टिकोण से तो उनका लक्ष्य भी भिन्न ही है। वहाँ के निबंधों का प्रमुख अंग आत्मचरित्र-चित्रण है। इस लक्ष्य-प्राप्ति के लिये यूरोप के निबंधकार कभी कभी कल्पित पात्र के नाम से भी लिखते हैं यथा चार्ल्स लैम्ब (इलिया), ए० जी० गार्डनर (अल्फा आफ द प्लाउ), आदि अन्यथा आत्मप्रशंसा पाठकों को असंतुष्ट रखती है और आत्मनिंदा आत्मतुष्टि में बाधक होती है। हिन्दी में भी 'आत्माराम' 'भुजंगभूषण' 'भट्टाचार्य' आदि दो एक कल्पित नामों से लिखे निबंध मिल जायँगे, किन्तु भारतवर्ष का दृष्टिकोण ही भिन्न है। सच तो यह है कि यदि पश्चिम की इस विशुद्ध परिभाषा वाले निबंधों की कसौटी पर हम हिन्दी के निबंध-साहित्य को कसेंगे, तो न केवल हमारा दृष्टिकोण संकुचित हो

जायगा वरन् हमें दस पाँच निबंधों तथा दो एक निबंधकारों (प्रतापनारायण मिश्र आदि) को छोड़कर कुछ भी साहित्य न मिलेगा। अतः निबंध शब्द से हमारे हिन्दी के प्रमुख आचार्य, विद्वान्, तथा समालोचक जिस प्रकार के लेख का अभिप्राय रखते हैं, उसी तुला पर हम अपने निबंध साहित्य को तौलेंगे। हाँ निबंध के प्रधान गुणों—आत्मीयता तथा व्यक्तित्व—पर हमें अपनी दृष्टि रखनी ही होगी, चाहे वे पश्चिम से ही क्यों न आए हों। यत्र तत्र तुलनात्मक समीक्षा के लिए पश्चिम के दृष्टिकोण का भी प्रश्रय लिया जायगा।

जिस प्रकार किसी भी भाषा के साहित्य में पद्यात्मक रचनाएँ गद्य से पहले निःस्यूत होती हैं, उसी प्रकार गद्य साहित्य में कथा-कहानी, नाटक-उपन्यास आदि, सुष्ठु साहित्यिक निबंधों से पहले प्रसूत होते हैं। कारण स्पष्ट ही है कि आख्यायिका या उपन्यास में यदि भाषा-शैथिल्य या विचारविश्रृङ्खलता भी होगी, तो भी पाठक का मनोरंजन हो जायगा किन्तु (निबंध के लिए तो एक विवेचना के उपयुक्त परिमार्जित शैली होनी चाहिए, तथा निबंध लेखक को अपने वैयक्तिक दृष्टिकोण से किसी 'वस्तु' पर चलना आवश्यक है, फिर विस्तृत अध्ययन, सूक्ष्म अन्वीक्षण, गंभीर चिंतन तथा मनन भी तो अपेक्षित हैं)—और ये तत्व गद्य साहित्य की प्रारंभिक अवस्था में दुष्प्राप्य हैं।

इसीलिए साधारण लेखों की तो बात दूसरी है किन्तु साहित्यिक निबंधों का हमारे यहाँ कुछ ही काल पूर्व तक प्रायः अभाव था। संस्कृत साहित्य में भी निबंध या प्रबंध नाम से जो रचनाएँ अभिहित होती थीं वे आधुनिक निबंध-संज्ञा-प्राप्त लेखों से नितांत भिन्न रहती थीं। संस्कृत वाङ्मय में निबंध केवल सूक्ष्म दार्शनिक विश्लेषण के लिए प्रयोग में लाया जाता था। फलतः वे बुद्धि-विशिष्ट, रूक्ष एवं वैज्ञानिक कोटि में ही रखे जा सकते हैं। "साहित्य की रसात्मकता का उनमें बहुत कुछ अभाव रहा, न तो उनमें व्यक्तित्व की कोई चमत्कार पूर्ण

मुद्रा दिखाई दी और न उनमें भावना प्रधान शैली का प्रवेश ही हो पाया।"

अतः काव्य, नाटक, कथा कहानी आदि तो हिन्दी साहित्य को संस्कृत से पैतृक संपत्ति के रूप में मिल गये किन्तु निबंध के नाम पर उसे 'निबंध' नाम के अतिरिक्त और कुछ न मिला। संस्कृत में प्रबन्ध शब्द भी अत्यंत प्रयुक्त हुआ है। परन्तु हिन्दी के शैशवकाल में इन दोनों शब्दों के आशय में कुछ अंतर माना जाने लगा था। (संबद्ध विचार तथा विषय वाली एक व्यापक रचना प्रबंध कहाती थी जिसमें गंभीरता पूर्वक किसी विषय के स्वरूप या महत्व आदि का प्रतिपादन किया गया हो और निबंध एक व्यक्तित्व प्रधान संक्षिप्त एवं स्वतंत्र तथा उपर्युक्त 'शिथिलता' पूर्ण रचना ही समझी जाती थी।) परन्तु आजकल उलटा हो रहा है। निबंध शब्द प्रबंध के ही अर्थ में प्रयुक्त होने लगा है। "संस्कृत के आचार्यों ने निबंध को बौद्धिक अभिव्यक्ति का साधन बनाया था, समस्त दार्शनिक विश्लेषण छंदों में हुआ था, पर थे ये निबंध ही।" शैली जटिल एवं सूत्रवत् थी और सभी आलेख रूखे, वैज्ञानिक और बुद्धिप्रधान थे। जितने प्रबंध गद्य में भी लिखे गए वे भी इतने रूखे और शुद्ध तार्किक थे कि साहित्य की कोटि में न आ सके।

हिन्दी में प्रबंधों की अवतारणा पाश्चात्य प्रबंधों के अनुसार हुई, संस्कृत के आदर्श के अनुकूल नहीं। अतः जो कुछ निबंध साहित्य इस समय तक हमें हिन्दी में प्राप्त होता है वह सब उसकी अपनी अर्जित संपत्ति है। इसीलिए हिन्दी-निबंध का इतिहास अधिक प्राचीन नहीं है। प्रातः स्मरणीय भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र ने जहाँ हिन्दी साहित्य के जीवन के साथ जाकर उसे अनेक नवीन पथों का पान्थ बनाया, और कविता नाटक आदि में परोक्षापरोक्ष रूप से एक नवीन युग का प्रवर्तन किया, वहीं निबंध भी उनकी प्रतिभा तथा साहित्य प्रेम के फल-

स्वरूप जन्म पा सका। यह सत्य है कि उन्होंने कोई अच्छे साहित्य-कोटि के निबंध नहीं लिखे, किन्तु यह निबंध का जन्मकाल था। उनकी अपनी रचना से अधिक उनकी प्रेरणा द्वारा प्रसूत रचना का महत्व है। उन्हीं के प्रभाव में आकर पं० बदरीनारायण चौधरी, ला० श्रीनिवास दास, पं० गोविन्दनारायण मिश्र, बा० तोताराम, मुं० ज्वाला प्रसाद, पं० प्रतापनारायण मिश्र, पं० अम्बिकादत्त व्यास, पं० केशव-राम भट्ट आदि कई अच्छे लेखक तैयार हो गए थे। इनमें से चौधरी जी, बा० तोताराम, व्यास जी पं० प्रतापनारायण आदि कुछ लोग पत्र संपादक थे, किन्तु अन्य लेखक भी यदा कदा एक-आध निबंध सामयिक पत्रिकाओं में लिख देते थे। ये लेखक "स्थायी विषयों के साथ साथ समाज की जीवनचर्या, ऋतुचर्या, पर्वत्यौहार, आदि पर भी साहित्यिक निबंध लिखते आ रहे थे। उनके लेखों में देश की परंपरागत भावनाओं और उमंगों का प्रतिबिंब रहा करता था। (होली, विजया-दशमी, दीपावली, रासलीला इत्यादि पर लिखे उनके प्रबंधों में जनता के जीवन का रंग पूरा पूरा रहता था। इसके लिए वे वर्णनात्मक और भावात्मक दोनों विधानों का बड़ा सुन्दर मेल करते थे।")

किन्तु इस प्रकार के लेखों की परम्परा बहुत शीघ्र बंद हो गई, या कम से कम बहुत कुछ कम हो गई। यहाँ एक बात का संकेत करना आवश्यक है कि ये थोड़े बहुत लेख या निबंध जो कुछ मिलते भी हैं उनमें निबंध की भिन्न भिन्न शैलियाँ या विशेषताएँ दृष्टिगोचर नहीं होतीं। कारण स्पष्ट है कि प्रथम तो अधिकांश लेखक निबंध कला से ही अव-गत नहीं थे—दूसरे निबंध रचना की ही ओर प्रवृत्ति रख कर किसी ने दृढ़ प्रयत्न नहीं किया। पं० रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों से उपर्युक्त कथन स्पष्ट हो जायगा। वे शब्द ये हैं:—

"बहुत से लेखकों का यह हाल रहा कि कभी अखबारनवीसी करते, कभी उपन्यास लिखते, कभी नाटक में दखल देते, और कभी

कविता की आलोचना करते और कभी इतिहास और पुरातत्व की बातें सामने लाते।"

इसीलिए तत्कालीन लेखकों में भाव-गांभीर्य या मौलिक विचारावली की उतनी प्रधानता नहीं है जितनी शब्द जाल या अनुप्रासप्रियता की। अनेक लेखक व्यर्थ की ही भूमिका बांधते थे "कुछ तो अपने निबंधों का प्रारम्भ 'कोटिशः धन्यवाद उस परम पिता परमेश्वर को है' आदि शब्दों से करते थे।...... रूढ़िगत धार्मिकता तथा भावुकता का प्रकाशन भी अधिक मात्रा में किया गया था।"

इस सामूहिक प्रवृत्ति के दिग्दर्शन के अनन्तर अब लेखकों की व्यक्तिगत विवेचना करना उचित ही होगा। इन्हीं लेखकों में से कई एक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक थे। अतः उनके संपादकत्व में उनकी पत्रिकाओं के द्वारा 'अग्रलेख' के रूप में किस प्रकार निबंध का विकास हुआ, इसके भी निदर्शन का प्रयत्न किया जायगा।

---

# निबंध का जन्म और भारतेन्दु काल

बा० हरिश्चन्द्र से पूर्व स्वामी दयानंद सरस्वती तथा उनका प्रतिवाद करनेवाले पं० श्रद्धाराम फुल्लौरी ने धार्मिक एवं सांप्रदायिक दृष्टिकोण से खण्डन मण्डन करने वाले संस्कृत की प्राचीन शैली पर कुछ लेख लिखे थे; भाषा की दृष्टि से ये अच्छे भी हैं, किन्तु इन्हें साहित्यिक लेख-कोटि में नहीं रखा जा सकता है, अतः बा० हरिश्चन्द्र से ही हम निबंध का जन्म मानकर आगे बढ़ते हैं।

इन बाबू साहब की ख्याति नाटकों के सृजन करने, कविता की भाषा में स्थिरता एवं नवजीवन लाने तथा हिन्दी गद्य-साहित्य की स्वतंत्र सत्ता का भाव प्रतिष्ठित करने में ही अधिक है; किन्तु 'कवि वचन सुधा', 'हरिश्चन्द्र चंद्रिका', 'बाला बोधिनी' के सम्पादक के स्तर से उन्होंने अनेक लेख भी लिखे थे। ये लेख या तो तत्कालीन धार्मिक, राजनीतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का चित्र ही अधिक अंकित करते हैं, या किसी साधारण किन्तु स्थायी विषय का विवेचन करते हैं। इनमें मौन्टेन के समान व्यक्तित्व या मौलिकता यद्यपि नहीं के बराबर रहती थी तथापि ये हिन्दी-निबंध के भविष्य को पूर्णतया सूचित करते हैं। इनके अधिकांश लेख हरिश्चंद्र कला भाग ४ में संगृहीत हैं। इनमें 'इँग्लैण्ड और भारतवर्ष' 'हम मूर्तिपूजक हैं' 'श्रुतिरहस्य' 'एक अपूर्व स्वप्न' 'सूर्योदय' 'होली' 'त्योहार' 'भूकम्प' 'मित्रता' 'खुशी' 'अपव्यय' और 'संगीतसार' प्रमुख हैं। नीचे इनके संगीतसार तथा खुशी नामक दो निबंधों से थोड़ा सा अंश उद्धृत किया जाता है जिससे इनके वाक्य-विन्यास तथा भाव-प्रकटीकरण पर प्रकाश पड़ेगा। संगीतसार वाले उद्धरण में 'प्रबंध' शब्द पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है, क्योंकि इससे यह स्पष्ट है कि

भारतेन्दु जी अपने लेख की रचना प्रबंध की दृष्टि से करते थे। 'खुशी' एक १५ पृष्ठों का लम्बा सा निबंध है, किन्तु उसमें वास्तविक निबंध के गुण सर्वथा उपस्थित हैं। उसकी भाषा हिन्दी की अपेक्षा उर्दू के अधिक निकट है, अतः उसके भारतेन्दु रचित होने में यद्यपि सन्देह होता है किन्तु लिखा उन्हीं ने था, और 'हरिश्चन्द्र कला' में संगृहीत होना इसका प्रमाण है।

"भारतवर्ष की सब विद्याओं के साथ यथाक्रम संगीत का भी लोप हो गया। यह गानशास्त्र हमारे यहाँ इतना आदरणीय है कि सामवेद के मंत्र तंत्र गाए जाते हैं। हमारे यहाँ वरंच यह कहावत प्रसिद्ध है 'प्रथमनाथ तब वेद'। अब भारतवर्ष का संपूर्ण संगीत केवल कजली ठुमरी पर आरहा है। तथापि प्राचीन काल में यह शास्त्र कितना गंभीर था यह हम इस लेख में दिखलावेंगे।"

× × ×

"हमारे प्रबंध से बढ़ने वालों को एक ही रागनी का नाम बारंबार कई रागों में देखकर आश्चर्य होगा। यह हमारा दोष नहीं, यह संगीत-सार के प्रचार की न्यूनता से ग्रन्थों में गड़बड़ हो गई है। कोई अन्वेषण करने वाला हुआ नहीं जो............।"

('संगीत सार' से)

"हस्वदिल ख्वाह आमूदगी को खुशी कह सकते हैं, यानी जो हमारे दिल की ख्वाहिश हो वह कोशिश करने से या इत्तफाकिया वगैर कोशिश किए आवे तो हमको खुशी हासिल होती है।

इसी खुशी के हम तीन दर्जे कायम कर सकते हैं याने आराम, खुशी और लुत्फ।.........

इसी से हम कहते हैं कि खुशी से मरतबः से कुछ वास्ता नहीं खुशी एक नेअमते उज़मा है जिसे हर शख्स नहीं पाता।

(खुशी से)

भारतेन्दु जी की शैली में लल्लूलाल का व्रजभाषापन नहीं है मुं० सदासुखलाल का पण्डिताऊपन नहीं है, सदलमिश्र का पूर्वी-पन भी नहीं मिलता है, इंशा अल्ला खाँ का चुलबुलापन भी नहीं, तथा शिवप्रसाद जी का उर्दूपन भी सर्वत्र उतना नहीं, और राजा लक्ष्मण सिंह का 'खालिसपन' भी नहीं है। भाषा सुबोध है, उसमें फारसी अरबी के शब्द होने पर भी वह हिन्दी ही है। परन्तु भाषा के ये गुण उनके नाटकों के गद्य में ही हैं, निबंधों की भाषा में वह प्रवाह और वह टकसालीपन नहीं है कदाचित् वे कार्य भार एवं स्वच्छंद स्वभाव के कारण उन अशुद्धियों के दूर करने की चिंता भी न करते थे। "उनकी भावावेश की शैली दूसरी है, और तथ्यनिरूपण की शैली दूसरी। भावावेश की भाषा में वाक्य बहुत छोटे छोटे होते हैं, पदावली सरल बोलचाल की होती है, जिसमें बहुत प्रचलित साधारण अरबी फारसी के शब्द भी कभी कभी, पर बहुत कम, आ जाते हैं। जहाँ चित्त के किसी स्थायी क्षोभ की व्यंजना और चिंतन के लिए कुछ अवकाश है, वहाँ की भाषा कुछ अधिकसाधु और गंभीर तथा वाक्य कुछ बड़े हैं, पर अन्वय जटिल नहीं है।"

---

# निबंध का विकास

## बालकृष्ण भट्ट; हिन्दी प्रदीप

भारतेन्दु जी के उपरांत उन्हीं के समकालीन पं० प्रतापनारायण मिश्र तथा पं० बालकृष्ण भट्ट के नाम निबंध लेखकों में चिरस्मरणीय रहेंगे। एडीसन और स्टील के युग्म के समान ही हिन्दी में इन दोनों की जोड़ी है। इन दोनों में भी एडीसन के समान भट्ट जी का स्थान कुछ ऊँचा है। भट्ट जी को यदि हम साहित्यिक निबंध का जन्मदाता कहें, तो कोई भी अत्युक्ति नहीं होगी। यह प्रतापनारायण जी से कुछ पहले भी हुए और इनको रचना भी मिश्र जी से अधिक एवं सुरुचि संपन्न है, अतः पहले हम इन पर विस्तार के साथ विचार करेंगे। तथा यहीं पर भट्ट जी द्वारा संपादित 'हिन्दी प्रदीप' से निबंध का विकास कैसे हुआ, यह भी देखेंगे।

उक्त हिन्दी प्रदीप के बत्तीस वर्षों के जीवन में भट्ट जी ने दो सौ से अधिक अच्छे अच्छे निबंध लिखे थे। ये प्रायः सभी हिन्दी साहित्य के अमर रत्न रहेंगे। किन्तु खेद है कि २५ निबंधों का एक संग्रह[1] 'साहित्य सुमन' के नाम से जो निकला है उसके अतिरिक्त भट्ट जी के कम से कम १०० निबंध 'हिन्दी' प्रदीप' की पुरानी प्रतियों में ऐसे होंगे जिनका प्रकाशित होना नितांत आवश्यक है। एक तो वैसे ही हिन्दी में निबंध-साहित्य की इतनी शोचनीय दशा है उस पर हिंदी

---

[1]सुनते हैं कि कोई एक संग्रह और भी प्रकाश में आया है, परन्तु उसे देखने का मुझे सौभाग्य नहीं प्राप्त हो सका है।

प्रेमियों की यह उपेक्षा तो और भी खटकती है। यदि ये निबंध अपने यथावत् रूप में हिन्दी संसार के सम्मुख रखे जायँ तो न केवल उसका मनोरंजन होगा प्रत्युत उक्त लेखों से एक प्रेरणा, एक उत्साह भी मिलेगा कि ऐसे छोटे छोटे विषयों पर भी ऐसी सुन्दरता के साथ लिखा जा सकता है, हिन्दी-साहित्य-भण्डार तो संपन्न होगा ही। उपर्युक्त संग्रह में जो पच्चीस निबंध प्रकाशित भी हुए हैं उनका संपादन देख कर तो और भी दुख तथा क्षोभ होता है, क्योंकि न जाने कितने वाक्य के वाक्य छोड़ दिये गए हैं; साथ ही अनुच्छेदों (Paragraphs) का निर्माण, विराम चिह्नों का प्रयोग, अनेक पूर्वी या भट्ट जी के विशिष्ट शब्दों को आधुनिक खड़ी बोली का जामा पहना कर जो 'शुद्धि' की गई है, वह तो और भी चिंतनीय है।

यहाँ पर स्थान संकोच के कारण उन सब निबंधों की सूची तो नहीं दी जा सकती, फिर भी कुछ निबंधों के नामों को देख कर ही अनुमान किया जा सकता है कि वे भट्ट जी के व्यक्तित्व तथा मनोरंजक एवं मुहावरेदार शैली के मेल में आकर कितने सुन्दर उतरे होंगे। कुछ नाम ये हैं :—

'पैसा', 'नहीं', 'दीर्घायु', 'वकील', 'इङ्गलिश पढ़ै सो बाबू होय', 'पसंद', 'प्रीति', 'बाल्यावस्था', 'स्वप्न', 'दम', 'दोस्ती', 'माँ', 'नाम', 'पुनर्जन्म', 'अभिलाषा', 'ल', 'एक पत्नीव्रत', 'रोटी तो किसी भाँति कमा खायँ मुछंदर।'

ऊपर की नामावली इस दृष्टि से दी गई है कि उसमें व्यंग्यपूर्ण, गंभीर, विवरणात्मक, भावात्मक आदि कई प्रकार के जो भट्ट जी के लेख हैं वे सभी आ जायँ। इनके अतिरिक्त 'कुलीनता', 'सहानुभूति', 'मन और नेत्र', 'मनोविज्ञान', 'चरित्र पालन', 'महाजन' आदि लगभग दो दर्जन लेख तो—क्या भाषा की दृष्टि से, क्या भाव की दृष्टि से—किसी भी भाषा के उच्चकोटि के साहित्यिक निबंधों के समकक्ष रखे जा सकते हैं।

२

प्रथम निबंध समुदाय में से 'वकील' का एक अंश यहाँ दिया जाता है और दूसरे में से 'मनोविज्ञान' का। इन उद्धरणों से लेख के बढ़ जाने का अवश्य भय है, किन्तु बिना इनके वास्तविक स्थिति से परिचय भी नहीं हो सकता।

"यह जानवर ब्रिटिश राज्य के साथ ही साथ हिन्दुस्तान में आया है—पुराने आर्यों के समय कहीं इनका पता भी नहीं लगता। मुसलमानों की सल्तनत में भी वकील वही कहलाते थे जो छोटे राजा या रईसों की ओर से किसी चक्रवर्ती बड़े राजा के दरबार में रहा करते थे पर किसी न्यायकर्त्ता के सामने वादी प्रतिवादी की ओर से अब के समान वादानुवाद से उस वकील को कोई सरोकार न था।"

'वकील'—से

"साधारण रीति पर विचार करने से निश्चय होता है कि हम लोगों का समस्त ज्ञान दो प्रधान भागों में विभक्त है। पहला मूर्ति-विषयक अर्थात् जड़ जगत् संबंधीय (?) और दूसरा अमूर्ति विषयक अर्थात् अंतर्जगत् संबंधीय। अंग्रेजी में इन दोनों को ( Objective ) और Subjective ज्ञान कहते हैं। पदार्थों के कुछ थोड़े से गुणों के अतिरिक्त मूर्ति अमूर्ति का मुख्य तत्व क्या है, हम कुछ नहीं जानते। जैसा गुलाब के कहने से केवल एतना (?) ही जान पड़ेगा कि जिस पदार्थ की आकृति गोल और जिसका रंग कुछ लाल और जिसमें एक प्रकार की मीठी सुगंध भी हो, उसका नाम गुलाब है। इस स्थल पर गोलाई, ललाई और सुगंध इत्यादि कई गुणों ही को हमने गुलाब इस नाम से लिखा किन्तु वह वास्तव में क्या पदार्थ है इस तत्व का कुछ भी निश्चय न हुआ।........."

'मनोविज्ञान'—से

भट्ट जी के द्वारा हिन्दी प्रदीप में, पं० प्रतापनारायण मिश्र द्वारा "ब्राह्मण" में, तथा पं० बदरीनारायण चौधरी द्वारा "आनंद

कादंबिनी में कुछ लेख मुखपृष्ठ पर ही लिखे जाते थे। इन लेखों में छोटे छोटे विषयों को लेकर ये लेखक अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण से कुछ विचार प्रकट करते थे। तीनों ही प्रतिभासंपन्न थे अतः जहाँ से भी लिखने बैठ गए, वहीं से अनेक प्रासंगिक अप्रासंगिक विषयों पर मित्र-मंडली के समान स्वच्छंद विचार प्रकट करते चले गए। हृदय-द्वार उन्मुक्त कर दिया, पाठक से घनिष्ठता स्थापित होगई एवं निबंध के वास्तविक गुण आ गए। विषय-विवेचन में लेखक का अपना दृष्टि-कोण होने के कारण मौलिकता रहती थी तथा लेखक का व्यक्तित्व एवं आत्मीयता भी भरपूर होती थी। इस दृष्टि से यों तो तीनों ही लेखकों के नाम हिन्दी के निबंध साहित्य के उन्नायकों तथा उसका भरण-पोषण करने वालों के रूप में चिरस्मरणीय रहेंगे, किन्तु भट्ट जी का स्थान सर्वोच्च है। उन्होंने रचना भी अधिक परिमाण में की, भाषा भी उनकी औरों की अपेक्षा अधिक संयत, प्रवाहमयी एवं मुहावरेदार है, तथा समय भी उनका तीनों में कुछ पहले ही है। अतः उनकी और उनके 'हिन्दी-प्रदीप' की चर्चा आरंभ होती है।

हिन्दी प्रदीप में 'अग्रलेख' के रूप में प्रकाशित कुछ लेख ये हैं:—

"नहीं" "माधुर्य" "देश या जाति के अधःपात के साथ उसका पौरुषेय गुण भी चला जाता है" "मनुष्य की बाहरी आकृति मन की एक प्रतिकृति है" "स्थिर अध्यवसाय या दृढ़ता" "सभ्यता और साहित्य" "कल्पना शक्ति" "ग्रामीण भाषा" "धर्म का महत्व" "आत्म-निर्भरता" "राजा" "जवान" "फकीरी" "महाजन" "मन की दृढ़ता" "संभाषण"।

यों तो लगभग इतने ही लेख और इसी रूप में प्रकाशित हुए हैं, किन्तु इस नामावली तथा विषय-भिन्नता पर दृष्टि डालकर ही अनुमान किया जा सकता है कि भट्ट जी तथा 'हिन्दी-प्रदीप' के द्वारा कैसे निबंधों का स्वरूप निखरा। अंतिम छः लेख तो बड़े ही अच्छे बन पड़े

हैं। इनमें भट्ट जी का व्यक्तित्व भी स्पष्ट झलक रहा है, और शैली भी प्रौढ़ है। लिखते समय आप अपना हृदय कपाट खोलकर रख देते हैं। भावगोपन की प्रवृत्ति का तो आप में नितांत अभाव है।

"आत्मनिर्भरता" से थोड़ा सा अंश उदाहरणवत दिया जाता है:—

"बहुधा देखने में आता है कि किसी काम के करने में बाहरी सहायता इतना लाभ नहीं पहुँचा सकती, जितनी आत्मनिर्भरता। समाज के बंधन में भी देखिए तो बहुत तरह के संशोधन सरकारी कानूनों के द्वारा वैसे नहीं हो सकते, जैसा समाज के एक एक मनुष्य का अलग अलग अपना संशोधन अपने आप करने से हो सकता है। कड़े से कड़ा कानून आलसी समाज को परिश्रमी, अपव्ययी या फ़िजूलखर्च को किफायतशार या परिमित व्ययशील, शराबी को परहेज़गार...... इत्यादि नहीं बना सकता। किन्तु ये सब बातें हम अपने ही प्रयत्न और चेष्टा से अपने में ला सकते हैं। सच पूछो तो जाति या कौम भी सुधरे हुए ऐसे एक एक व्यक्ति की समष्टि है।"

यह तो हुई भट्ट जी के विचारशील निबंध की बात। यदि उनकी कल्पना की अद्भुत छटा देखना हो तो चद्रोदय नामक लेख में देखिए।

यहाँ पर हमें इस बात का ध्यान रखना होगा कि भट्ट जी के समय में हिन्दी गद्य साहित्य कोई उन्नत अवस्था में नहीं था, अतः भट्ट जी के लेख. गंभीरता तथा मननशीलता के परिणाम-स्वरूप नहीं लिखे गए थे वरन् छोटे छोटे लेखों द्वारा अनेक बातों का ज्ञान कराना तथा मनोरंजन इन्हीं दो उद्देश्यों से उनके निबंध लिखे जाते थे। 'तो निश्चय हुआ', "तात्पर्य यह निकला" के समान खंड वाक्यों का पुनः पुनः प्रयोग भी यही सूचित करता है कि लेखक प्रारंभिक शिक्षावाले बच्चों को यःकश्चित् ज्ञान कराने के समान नितांत साधारण तथा प्रारंभिक बातों के बताने में प्रयत्नशील है। भट्ट जी के कुछ निबंधों के शीर्षक

भी बड़े विचित्र हैं, जैसे 'प्रेम के बाग का सैलानी', "कवि और चितेरे की डांडा मेड़ी", "पुरुष अहेरी की स्त्रियाँ अहेर हैं।"

भट्ट जी के गद्य प्रबंधों के विषय सामाजिक, साहित्यिक और राजनीतिक सभी प्रकार के हैं। अपनी भाषा में उन्होंने कहावतों और मुहावरों का अधिक और अच्छा प्रयोग किया है। पूर्वी प्रयोग भी कभी कभी मिल जाते हैं। भट्ट जी की भाषा यद्यपि संस्कृत प्रधान है, परन्तु उसमें अनेक अंग्रेजी एवं उर्दू-फारसी के बड़े बड़े शब्द भी यथास्थान रखे मिलते हैं। पद पद पर मैकाले, एडीसन, जानसन के सदृश अंग्रेजी लेखकों तथा कालिदास भवभूति के सदृश संस्कृत कवियों का निर्देश करना इस बात का पूर्ण परिचायक है कि उक्त दोनों साहित्यों के भट्ट जी अगाध विद्वान् थे।

---

# पं० प्रताप नारायण मिश्र तथा उनके समकालीन अन्य लेखक

पं० बालकृष्ण जी के उपरांत पं० प्रताप नारायण मिश्र का स्थान भी बड़ा महत्त्वपूर्ण है। ये 'ब्राह्मण' नामक पत्र का संपादन करते थे। इनके लेखों में विनोद की मात्रा अधिक मिलती है, इससे लेखक के साथ पाठक की घनिष्ठता स्थापित हो जाती है। मिश्र जी के लिए विषय कोई भी हो वे उसे अपने व्यक्तित्व से विनोदपूर्ण और मनोरंजक बना लेते थे। इसीलिए इनके निबंधों की सूची में "देशदशा, समाज-सुधार, नागरी-हिन्दी-प्रचार साधारण मनोरंजन आदि" सब प्रकार के लेख मिलते हैं। गंभीर तथा साधारण दोनों प्रकार की शैलियाँ उनमें हैं। उनके निबंधों के तीन संग्रह अब तक प्रकाशित हुए हैं "निबंधनवनीत", "प्रताप पीयूष" और "प्रताप समीक्षा"। पहले में ४१ निबंध हैं। दूसरे संग्रह में अधिकांश तो इन्हीं में से हैं किन्तु चार छः नये भी हैं जैसे 'खुशामद', 'शिवमूर्ति', 'सोने का डंडा और पौंडा' 'दो' आदि। इसी प्रकार प्रताप समीक्षा में केवल तीन निबंध—वृद्ध, काल, और बात—नए हैं, शेष ऊपर के दोनों संग्रहों में आ चुके हैं।

इस प्रकार हम यह देखते हैं कि भट्ट जी के समान मिश्र जी के निबंधों के विषय में साहित्य-प्रेमी उदासीन नहीं हैं, किन्तु फिर भी अच्छा होता है यदि मिश्र जी के सदृश एक उत्कृष्ट निबंधकार के इन तीन संग्रहों में प्रकाशित तथा अन्य निबंध जो 'ब्राह्मण' में तो समय समय पर निकले हैं किन्तु पुस्तकाकार नहीं हो पाए हैं, उन सब का वैज्ञानिक रीति से एक पुस्तक में संपादन कर दिया जाय। साथ ही उसी में या प्रथक् एक विस्तृत समालोचना भी लिखी जाय जिससे पंडित जी की संपूर्ण निबंध सामग्री से साधारणजन भी परिचित हो जायँ। पाश्चा-

न्य देशों में छोटे से छोटे लेखक के लेख कितने उत्साह के साथ पुस्तका-कार किए जाते हैं और उसकी मूल रचना से अधिक उस पर समा-लोचनात्मक ग्रंथ लिखे जाते हैं किन्तु हमारे देश में हिन्दी के एक प्रमुख निबंधकार के लेखों की यह दशा है कि उसके लेख भी एकत्रित नहीं किए गए हैं। मेरी दृष्टि से तो जिन तत्वों के आधार पर अंग्रेजी में वास्तविक निबंधकारों की कोटि में चार्ल्स लैम्ब को एक प्रमुख स्थान दिया जाता है, उसी आधार पर, निबंध की उस प्रारंभिक परिभाषा को मान कर, मिश्र जी को भी हिन्दी के निबंधकारों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

मिश्र जी के अप्रकाशित निबंधों में से कुछ बहुत ही सुन्दर लेखों के नाम ये हैं :—"जुवा", "उपाधि", "प्रताप चरित्र" "ता", "नास्तिक", "आप बीती कहूँ कि जग बीती", "अपव्यय", "चिंता" "मन", "छल", "ईश्वर की मूर्ति", "लड़ते हैं पर हाथ में तलवार भी नहीं है", "विश्वास", "छै ! छै !! छै !!!", 'वज्र मूर्ख', 'पेट', 'सत्य', 'आत्मीयता', 'होली है अथवा होरी है', 'स्वार्थ', 'भलमंसी', 'दान', "घूरे क लत्ता विनै कनातन का डौल बाँधै", "टेढ़ जानि शंका सब काहू", 'मुच्छ'।

श्री प्रतापनारायण जी एक कान्य कुब्ज ब्राह्मण थे। ब्राह्मणों में कन्या का विवाह कितनी कठिनता से होता है इसका ध्यान रख कर 'उपाधि' निबंध को पढ़िए, मिश्र जी का समस्त निबंध कौशल प्रकट हो जायगा। प्रकाशित निबंध तो उनकी उक्त तीन पुस्तकों में देखे ही जा सकते हैं, किन्तु कलेवर-वृद्धि की आशंका को छोड़कर यहाँ उनका 'उपाधि' नामक एक अप्रकाशित निबंध आद्योपांत लिखा जा रहा है, क्योंकि मिश्र जी एक उत्कृष्ट निबंधकार हैं और उक्त निबंध उनका एक श्रेष्ठ निबंध है, अतः पाठक क्षमा करेंगे।

## 'उपाधि'

'यद्यपि जगत में और भी अनेक प्रकार की आधिव्याधि हैं पर उपाधि सब से भारी छूत है। सब आधिव्याधि यतन करने तथा ईश्वरेच्छा से टल भी जाती हैं पर यह ऐसी आपदा है कि मरने ही पर छूटती है, सो भी क्या छूटती है नाम के साथ अवश्य लगी रहती है हाँ यह कहिए कि सताती नहीं है यदि मरने के पीछे भी आत्मा को कुछ करना धरना तथा आना जाना या भोगना-भुगतना पड़ता होगा तो हम जानते हैं उस दशा में भी यह राँड पीछा न छोड़ती होगी, दूसरी आपदा छुट जाने पर तन और मन प्रसन्न हो जाते हैं पर यह ऐसा गुड़ भरा हँसिया है कि न उगलते बने न निगलते बने उपाधि लग जाने पर उसका छुड़ाना महा कठिन है; यदि छूट जाय तो जीवन को दुःखमय कर दे संसार भर में थुड़ू थुड़ू रहे और बनी रहे तो उसका नाम ही उपाधि है। हमारे कनौजिया भाइयों में आज विद्या, बल, धन, इत्यादि कोई बात बाकी नहीं रही केवल उपाधि ही मात्र शेष रही है ककहरा भी नहीं जानते पर द्विवेदी, चतुर्वेदी, त्रिवेदी, त्रिपाठी आदि उपाधि बनी हैं पर इन्हीं के अनुरोध से बहुतेरे उन्नति के कामों से वंचित हो रहे हैं न विलायत जा सकें न एक दूसरे के साथ खा सकें, न छोटा मोटा काम करके घर का दरिद्र मिटा सकें परमेश्वर न करे यदि इस दीन दशा में कोई कन्या हो गई तो और भी कोढ़ में खाज हुई। घर में धन न ठहरा बिना धन बेटी का व्याह होना कठिन है, उतर के व्याह दें तो नाक कटती है न व्याहें तो इज्ज़त धर्म पुरखों के नाम में बट्टा लगने का डर है यह सब आफतें केवल उपाधि के कारण हैं। शास्त्रों में उपाध्याय पढ़ानेवाले को कहते हैं यह पद बहुत बड़ा है पर उपाधि और उपाध्याय दोनों शब्द बहुत मिलते हैं इससे हमारी जाति में उपाध्याय एक नीच पदवी ( धाकर ) मान ली गई है इस नाम

के मेल की बदौलत एक जाति को नीच बनाना पड़ा पर नीच बनने पर भी छुटकारा नहीं है वे धाकर हैं उन्हें बेटी व्याहने में और भी रुपया चाहिए वरंच बेटा व्याहने के लिए भी कुछ देना ही होता है। यह दुहरा घाटा केवल उपाधि के नाम का फल है। हमारे बंगाली भाई भी कान्यकुब्ज ही कुल के हैं पर उन्होंने मुखोपाध्याय, चट्टो-पाध्याय इत्यादि नामों में देखा कि उपाधि लगी है कौन जाने किसी दिन कोई उपाधि खड़ी कर दे इससे बुद्धिमानी करके नाम ही बदल डाले मुकरजी चटरजी आदि बन गए यह बात कुछ कनौजियों में ही नहीं है जिसके नाम में उपाधि लगी है उसको सदा उपाधि लगी रहेगी। आज आप पंडितजी, बाबू जी, लालाजी,शेखजी आदि कहलाते हैं बड़े आनंद में है चार जजमानों को अशीर्वाद दे आया कीजिए या छोटा मोटा धन्धा या दस पाँच की नौकरी कर लिया कीजिए परमात्मा खाने पहनने को दे रहेगा, खाइए पहिरिए पाँव पसार के सोइए, 'न ऊधव के लेने न माधव के देने' पर यदि प्राज्ञ, विद्यासागर, बी०ए०, एम० ए० आदि की उपाधि चाहनी है तो किसी कालेज में नाम लिखाइए परदेस जाइए 'नींद नारि भोजन परिहरही' का नमूना बनिए पाँच सात बरस में उपाधि मिल जायगी पर साथ ही यह उपाधि लग जायगी कि घर में चाहे खाने को न हो पर बाहर बाबू बन के निकलना पड़ेगा—चाहे भूखो मरिए पर धन्धा कोई न कर सकिएगा नौकरी भी जब आपके लायक मिलेगी तभी करना नहीं तो 'बात गए कछु हाथ नहीं है' एक प्रकार की उपाधि सरकार से मिलती है यदि उसकी भूख हो तो हाकिम की खुशामद तथा गौरांगदेव की उपासना में कुछ दिन तक तनमन धन से लगे रहिए कभी न कभी आपके नाम में सी० यस० आई० अथवा ए बी सी के किसी अक्षर का पुछल्ला लग जायगा अथवा राजा, राय बहादुर, खाँ बहादुर अथवा महामहोपाध्याय की उपाधि लग जायगी पर यह न समझिए कि राजा कहलाने के

साथ कहीं की गद्दी भी मिल जायगी अथवा सचमुच के राजा भी आपके कुछ गनैं गूँथैंगे, हाँ मन में समझे रहिए कि हम भी कुछ हैं पर उपाधि की रक्षा के लिए कपड़ा लत्ता चेहरा मोहरा सवारी शिकारी हुजूर की खातिर दारी आदि में घर के धान पयार मिलाने पड़ेंगे अपने धर्म कर्म देश जाति आदि से फिरंट रहना पड़ेगा क्योंकि अब तो आपके पीछे उपाधि लग गई न, इससे कहते हैं कि उपाधि का नाम बुरा है। उपाधि पाना अच्छा है सही पर ऐसा ही अच्छा है जैसा वैकुंठ जाना पर गधे पर चढ़कर।"

मिश्र जी की शैली की स्वच्छंदता, हास्यविनोदप्रियता, आत्मीयता, ग्रामीणता, रोचकता, सजीवता, शैथिल्य एवं भद्दापन प्रधान विशेषताएँ हैं। उन्होंने वैसवारे की कहावतों का तथा साधारण प्रचलित मुहावरों का भी प्रयोग अधिक किया है। 'आँप-साँप', 'बात-बतंगड़', 'रोग-दोख', 'झपकी-फुँदनी', 'चेहरा-मोहरा' के सदृश शब्द युग्मों का भी प्रयोग अधिक मिलता है।

इन लेखकद्वय के उपरांत पं० बदरीनारायण चौधरी का नाम भी स्मरणीय है। ये 'आनंद कादंबिनी' नामक पत्रिका के संपादक थे। इस पत्रिका के 'कादंबिनी' (मेघमाला) नाम पर तदंतर्गत भिन्न भिन्न शीर्षकों में सांग रूपक की कल्पना की गई है यथा 'सम्पादकीय सम्मति समीर', 'हास्यहरितांकुर', 'वृत्तांतबलाकावलि', 'काव्यामृतवर्षा, 'विज्ञापन वीर बहूटियाँ' आदि। इस पत्रिका में कभी कभी तो आद्योपांत इन्हीं को लिखना पड़ता था—कदाचित् लेखक ही न मिलते थे। दूसरे चौधरी जी अपने समान किसी को 'लिक्खाड़' नहीं समझते थे। प्रथम तो इन्होने निबंध लिखे ही कम, उनमें भी कुछ साहित्यिक कोटि में नहीं आते। फिर भी "हमारी मसहरी" 'फाल्गुन' 'मित्र' 'ऋतु वर्णन' 'परिपूर्ण पावस' आदि कई अच्छे अच्छे निबंध निकले थे। आपने कुछ आलोचनात्मक लेख भी लिखे थे किन्तु वे विशुद्ध निबंध

नहीं कहे जा सकते हैं। मिश्र जी या भट्ट जी के समान इनके निबंधों का कोई संग्रह भी नहीं प्रकाशित हुआ है, वास्तव में इनकी प्रसिद्धि नाटक तथा पद्यात्मक गद्य लिखने के ही कारण है। यहाँ 'हमारी मसहरी' से प्रारंभिक अनुच्छेद दिया जाता है, जिससे यह स्पष्ट है कि जो कुछ 'प्रेमघन' जी ने लिखा वह मौलिक तथा व्यक्तित्व को लिए हुए है, यह बात दूसरी है कि लिखा ही कम है।

"हमारी मसहरी कलियुग की तपोभूमि है जहाँ मसा और मक्षिका राक्षसियाँ बाहर ही सिर पीटती रह जाती हैं और हमारे भावनाओं के वृहत् हाट में वा ध्यान के प्रशांत लोक में कुछ भी बाधा नहीं पहुँचा सकतीं, अथवा यह कृत्रिम हालैण्ड की भूमि सी है जिस के बाहर ही मसा-मक्षिका-समूह-समुद्र की घनी लहरें इसके आवरण बाँध से टकराती हुईं विचित्र सुहावने शब्दों को सुनातीं पर मजाल नहीं कि उनकी मौजें भीतर प्रवेश पा सकें; वा यह मानव-शरीर का द्वितीय पिंजर या कवच है; वा चंचल मन के एकाग्र करने का एक विचित्र योगयत्न है; वा इस अशांत लोक में एक कृत्रिम शांतस्थली है जिसमें भक्त मकरा चारों ओर से जालों की चद्दरें तान स्वस्थ मन बीच में बैठा मसा मक्षिका रूपी माया से कहता है कि न तू मेरे जाल में फँस और न मैं तेरे जाल में फँसूँ.............।

चौधरी जी की भाषा बड़ी आडंबर पूर्ण है, वे एक प्रकार से पांडित्य प्रदर्शन को ही लिखना समझते थे, इसीलिए उनकी शैली में बड़ी कृत्रिमता है। लंबे लंबे वाक्य, अनुप्रास यमक और श्लेष में पंडित जी की रुचि विशेष रहती है। उनका विचार अवश्य यही था कि एक व्यावहारिक भाषा को ही लेखक को अपनाना ठीक है परन्तु स्वयं अपने निबंधों में प्रेम-घन जी ने अपने उस विचार की उपेक्षा की है।

इसी आनंदकादंबिनी में जो अन्य लेखक यदा कदा मिल जाते

हैं उनमें से हरिश्चंद्र शर्मोपाध्याय तथा पं० नर्मदेश्वर प्रसाद उपाध्याय प्रमुख हैं। इनके दोचार लेख तो बहुत ही सुदर हैं। इन दोनों सज्जनों में पारस्परिक मैत्रीभाव भी विशेष है। पं० नर्मदेश्वर प्रसाद जी प्रयाग के गण्य-मान्य वकील हैं। आप जार्जटाउन में रहते हैं। आपने अपने मित्र हरिश्चंद्र शर्मा के लेखों को 'साहित्य हृदय' नाम से प्रकाशित करवाया है उक्त पुस्तक में १८ सुन्दर एवं सुरुचि संपन्न लेख हैं जिनमें से कुछ तो उत्तम कोटि के निबंधों में स्थान पाने के अधिकारी हैं। यथा मित्र, कविता, विवाह, संतोष, आनंद, लखनऊ, फाल्गुन। उक्त शर्मा जी द्वारा लिखित कुछ और भी निबंध है जो 'आनंद कादंबिनी पत्रिका' में तो निकले परन्तु अन्यत्र कदाचित् प्रकाश में न आ सके हैं। यथा 'हमारी दिनचर्या 'क्षमा' 'जन्मभूमि' आदि।

'हमारी दिनचर्या' का थोड़ा सा भाग उदाहरणवत् दिया जाय।

"सकल लोक को तुल्य निवास देने वाली, बादशाह वा योगी, धनी वा दरिद्र, दुखी वा सुखी, स्वच्छंद वा पराधीन, सबी को अपने अपने रूप को विस्मृत कराने वाली, प्रलय का द्वितीय दृश्य सा दिखाने वाली, उस सर्व साक्षी सर्वचेता, केवल निगुर्ण स्वरूप आत्मा के वैभव को प्रकट करने वाली, चिन्ता चूर्णित मनुष्य से दूर भागने वाली, मही पतियों से क्रीड़ा करने वाली, कृषकों तथा मज़दूरों को गले से लिपटाकर सोने वाली, आँख उलझने पर प्रेमियों के पलकरूपी गृह को त्याग अनत वसने वाली, व्याधि पीड़ित मनुष्यों को दूर ही दूर से खड़ी ललचाने वाली निद्रा का हम उस समय त्याग करते हैं जिसे ऊषा वा सतयुग का समय वा ब्राह्ममुहूर्त कहते हैं।"

इन लेखकों के अतिरिक्त भारतेन्दु के समकालीन, उनके प्रभाव में आने वाले या उनके कुछ आगे पीछे लिखने वालों में से फ्रेडरिक पिंकाट, ला० श्री निवासदास, ठाकुर जगमोहन सिंह, पं० गोविन्द नारायण मिश्र, पं० किशोरी लाल गोस्वामी, तोताराम, पं० भीमसेन

शर्मा, पं० अंबिकादत्त व्यास तथा काशीनाथ खत्री आदि के कुछ नाम उल्लेखनीय हैं; किन्तु इसलिए नहीं कि उन्होंने निबंध रचनाएँ विशेष की या कोई विशेष शैलियों के आधार पर लेख लिखे, प्रत्युत इसलिए कि इन लेखकों के समय में हिन्दी-गद्य प्रायः अपनी शैशवावस्था में ही था अतः जो कुछ भी इन्होंने उलटा सीधा लिखा वही बहुत है—उसीसे गद्य साहित्य की—निबंध साहित्य की नहीं—श्री वृद्धि तथा उन्नति हुई। किसी ने किसी सामयिक पत्रिका में किसी साधारण सी वस्तु या प्रश्न को लेकर अथवा किसी सामयिक या देश दशा संबंधी घटना पर एक दो लेख लिख लिए। बस, इससे अधिक इनका कोई महत्त्व न था। इनमें से राधाचरण गोस्वामी का, आर्य शब्द का उपपादन या अंबिकादत्त व्यास का 'स्वर्ग सभा में नारद जी', 'ग्रामवास और नगर वास' तथा 'धैर्य' अथवा पं० दुर्गा प्रसाद का 'परलोकतत्त्व', ठाकुर जगमोहनसिंह का 'श्यामा स्वप्न' बालमुकुन्द गुप्त का, 'शिवशंभु का चिट्ठा' आदि जो भी दो चार लेख यत्र तत्र संगृहीत देखने को मिलते हैं, वे साधारण गद्य लेख ही ठहरेंगे, निबंध नहीं।

हाँ, इन लोगों की कृतियों से हिन्दी गद्य का मार्ग अवश्य प्रशस्त हो गया और आगे बनने वाले निबंध प्रासाद के लिए क्षेत्र प्रस्तुत होकर उसकी नींव रखने का भी समुचित आयोजन हो गया।

---

# पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी

निबंध साहित्य के दूसरे युग के जन्मदाता हैं पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी जिन्होंने बेकन के अँग्रेजी निबंधों का अनुवाद 'बेकन विचार रत्नावली' के नाम से किया, उसी काल के आस पास चिपलूणकर के मराठी निबंधों का अनुवाद पं० गंगा प्रसाद अग्निहोत्री ने "निबंध मालादर्श" के नाम से किया। इन दोनों पुस्तकों ने एक प्रकार से निबंध साहित्य के मार्ग का उद्घाटन किया किन्तु यह जान कर खेद होता है कि इस युग में द्विवेदी जी, पं० माधव प्रसाद मिश्र, बा० बालमुकुंद गुप्त, पं० गोविन्द नारायण मिश्र, पं० चंद्रधर शर्मा गुलेरी तथा बा० गोपालराम के अतिरिक्त कोई अच्छे क्या साधारण लेखक भी न हुए। इन लेखकों के भी अनेक लेख "बातों के संग्रह" के ही रूप में थे, "लेखक के अंतः प्रयास से निकली विचारधारा के रूप में नहीं।

हरिश्चंद्र कालीन भाषा की कृत्रिमता और आडंबर इस युग में बहुत कुछ कम हो गया, निबंध की बड़ी बड़ी भूमिकायें बाँधना भी लोगों ने बहुत कुछ छोड़ीं और भावात्मक निबंधों की अपेक्षा विचारात्मक लेखों का आधिक्य हुआ। भाषा में कुछ स्थिरता और शुद्धता भी आई, जिसका कारण था श्री द्विवेदी जी का भाषा को व्याकरण सम्मत बनाने का अनवरत प्रयास। निबंधों का विषय भी परिवर्तित हुआ और उसका क्षेत्रविस्तार भी हुआ।

द्विवेदी जी भी भारतेन्दु के ही सदृश एक युग के प्रवर्तक थे। हिन्दी कविता की भाषा और विचारावली के बदलने में, गद्य की अस्थिरता, अव्यावहारिकता तथा शिथिलता मिटाकर उसे विरामादि चिह्नों द्वारा सुबोध एवं शुद्ध बनाकर तथा उसकी एक रूपता के लिये सतत प्रयत्न करके उसे प्रत्येक भाव के एवं विचार के व्यक्त करने के उपयुक्त

बढ़ाने में पं० महावीर प्रसाद जी का कार्य सराहनीय है। किन्तु साथ ही साथ जहाँ एक ओर उन्होंने स्वयं लिखा वहाँ अपने प्रभाव से अनेक लेखक भी उत्पन्न किए। इस प्रकार उनके कारण भिन्न भिन्न विषयों के सैकड़ों लेख हिन्दी साहित्य को मिले। द्विवेदी जी ने ये लेख इस उद्देश्य से लिखे थे कि अँग्रेजी, बंगाली, मराठी, गुजराती आदि कई भाषाओं की अच्छी अच्छी एवं जानने योग्य बातों का हिन्दी वालों को भी ज्ञान हो जाय, अतः कभी कभी उन्होंने सामयिक पत्र पत्रिकाओं के ही किसी लेख को अथवा किसी विद्वान् की किसी पुस्तक के एक दो अध्यायों का अनुवाद या भावानुवाद करके ही 'सरस्वती' में प्रकाशित कर दिया—इसीलिए उनके लेख भावोद्रेक या रसानुभूति नहीं कराते, प्रत्युत केवल भिन्न भिन्न विषयों के ज्ञान का परिचयमात्र कराते से प्रतीत होते हैं। उपर्युक्त कथन की पुष्टि के लिये हम उनके निबंधों के प्रारंभ करने के दो चार ढंगों को देख सकते हैं, जिनका उन्होंने प्रायः प्रयोग किया है।

"राव बहादुर चिंतामणि वैद्य संस्कृत भाषा के अच्छे ज्ञाता हैं। पुरानी बातों के अनुसंधान में आपका जी खूब लगता है। नये नये रहस्यों के उद्घाटन में आप बड़े पटु हैं। आप की राय है कि कालि-दास ईसवी सन् के पहले विद्यमान् थे।"

"कालिदास का स्थितिकाल—"

इसी प्रकार "आर्यों की जन्मभूमि" का प्रारंभ इस प्रकार होता है :—

"पूने में नारायण भवानराव पावगी एक सज्जन हैं। आप पहले कहीं 'सबजज' थे। आप बड़े महत्वाकांक्षी, बड़े विद्याव्यसनी और मराठी भाषा के बड़े नामी लेखक हैं।.........आप एक बहुत बड़ा ग्रंथ मराठी में लिख रहे हैं। उसका नाम है—भारतीय साम्राज्य।"

"पूने के नारायण भवान राव पावगी महाशय बड़े पंडित हैं।

प्राचीन भारत के विषय में आपने कई पुस्तकें मराठी और अँग्रेजी भाषा में लिख डाली हैं.........उन्होंने इसे (सोमरस के विषय में फैले हुए प्रवाद को) ग़लत समझा और एक छोटी सी पुस्तक अँग्रेज़ी भाषा में लिखकर लोगों की ग़लती उनके गले उतार देने का परिश्रम उठाया। अपनी पुस्तक में आपने लिखा है कि सोमरस सुरा हरगिज नहीं।"

ऊपर कही हुई बात के समर्थन के अतिरिक्त एक बात इन उद्धरणों से और भी स्पष्ट है कि द्विवेदी जी मौलिकता का दंभ नहीं करते थे। जहाँ से जो कुछ सामग्री लेते थे उसका स्पष्ट निर्देश कर देते थे। आजकल के कुछ अपरिपक्व लेखकों के समान यह नहीं कि यहाँ वहाँ से सामग्री उड़ा ली, जोड़ गाँठ कर कुछ हेर फेर से रख दी, बस 'मौलिकता' का समावेश हो गया, फिर मूल लेखक के प्रति कृतज्ञता प्रकाशन की क्या आवश्यकता है। किन्तु पण्डित महावीर प्रसाद जी इस प्रकृति के नितांत विरोधी थे, अनेक लेख तो वे इस प्रकार प्रारंभ करते हैं :—

"इलस्ट्रटेड टाइम्स आफ इण्डिया में इस विषय पर एक अच्छा लेख निकाला है। उसमें लिखा है कि........"

"सोमनाथ के संबंध में गुजरात के गजेटियर के आधार पर कुछ ऐतिहासिक बातें हमें इस नोट में लिखनी हैं। गजेटियर में इस मंदिर का पुराना इतिहास बड़ी खोज से लिखा गया है।"

लेखों के बीच बीच में भी वे अपनी सामग्री या कथन के मूलाधार को बताते चलते हैं। "पूने में सर राम कृष्ण भंडारकर की संस्थापित जो गवेषणा समिति है उसके जर्नल की दूसरी जिल्द के पहले खण्ड में वैद्य महोदय का वह लेख निकला है। उसका आशय सुनिये—"

पंडित जी ने लेखापहरण का विरोध करने का बीड़ा ही उठाया था। अनेक लेखकों के दूसरों के लेख या भाव ज्यों के त्यों ले लेने पर उन्होंने आजन्म कटु समालोचना की, फिर भला वे स्वयं इस प्रकार

के चौर्य के अपराधी क्यों बनते ।

द्विवेदी जी के लेखों की साधारण परिस्थिति के दिग्दर्शन के उपरांत यदि हम उनकी संख्या पर विचार करें तो हमें इनके लेखों की संख्या इनके निकट पूर्ववर्ती और परवर्ती सभी लेखकों के लेखों से अधिक मिलती है । प्रकाशित भी लगभग सभी हुए हैं । ये लेख मुख्यतः संग्रह ग्रंथों में निकले हैं, यों तो दो चार और भी हैं :—

"साहित्य सीकर" 'साहित्य संदर्भ" "समालोचना समुच्चय" "विचार विमर्श": "रसज्ञरंजन" "लेखांजलि" और "आलोचनांजलि"। इनमें कतिपय लेख दो दो । (कभी तीन तीन तक) संग्रहों में आगये हैं । इनकी संख्या लगभग २५० है, किन्तु जैसा अन्यत्र भी कहा गया है अधिकांश लेख एक एक दो दो पृष्ठों के ही हैं, जिनसे साधारण साधारण बातों का परिचय कराया गया है । ऐसे कुछ लेखों के नाम दे देना अनुचित न होगा ।

"पुस्तकों का समर्पण", "किराये पर कवि", "पुरातत्वविभाग" 'हजार वर्ष के पुराने खंडहर', 'तिब्बती भाषा में एक प्राचीन संस्कृत ग्रंथ', 'महेन्द्रगिरि के मंदिर' 'कुमार पाल चरित', 'वैदिक कोष' 'डा० सतीशचंद्र वनर्जी', 'पेड़ पौधों में चेतना शक्ति' 'रोगपरीक्षा-यंत्र', 'सरकारी वजीफे', 'देशभक्ति की बात', 'देहात में बीमारी', 'उदारता में उफान', 'निःशब्द समर', 'जापान में पतंगबाजी' आदि ।

यहाँ पर 'पुस्तकों का समर्पण नामक लेख (निबंध उसे नहीं कह सकते) इसलिये दिया जाता है जिससे यह पता चल जाय कि द्विवेदी जी के अधिक लेख ऐसे ही हैं—अतः ये निबंध-कोटि में नहीं रखे जा सकते ।

"कुछ समय से हिन्दी पुस्तकों के कोई कोई लेखक, अनुवादक और प्रकाशक पुस्तक समर्पण के संबंध में एक अनुचित और अन्याय पूर्ण काम कर रहे हैं । रद्दी से रद्दी पुस्तक तक का समर्पण किसी के

नाम पर कर देना वे बहुत ज़रूरी समझने लगे हैं। उनके काम का यह पहला अनौचित्य है। जिस पुस्तक का कुछ भी महत्व नहीं, जिससे कुछ भी लाभ की संभावना नहीं उसके समर्पण की क्या आवश्यकता– भेंट में किसी को वही चीज़ दी जानी चाहिए जो अच्छी हो, बुरी चीज़ किसी को देना उसका अपमान करना है। फिर औरों की रची हुई दो दो चार चार सौ वर्ष की पुरानी पुस्तकों का समर्पण करने का अधिकार प्रकाशक को कहाँ प्राप्त हुआ। दूसरे की चीज़ का समर्पण करने वाले वे कौन हैं? उनके समर्पण कार्य का दूसरा अनौचित्य है कि जिनको वे पुस्तक समर्पण कर रहे हैं, उनसे ऐसा करने की अनुमति लेने तक की वे शिष्टता नहीं दिखाते। पुस्तक छापी और समर्पण-पत्र लगाकर भेज दी। बहुत हुआ तो एक चिट्ठी लिख दी कि बिना पूछे ही मैंने समर्पण कर दिया है! क्षमा कीजिये!! तीसरा अनौचित्य यह है कि कोई शिष्ट शिरोमणि जिसे पुस्तक समर्पण करते हैं उसी को उसकी समालोचना करने की आज्ञा भी दे देते हैं!!! इस अशिष्टता और अनाचार का कुछ ठिकाना है!! अब तक इन पंक्तियों के तुच्छ लेखक के नाम पर इसी तरह की कई पुस्तकों का समर्पण हो चुका है। प्रार्थना है कि अब इस पर और अन्याय न किया जाय। वह अपने को समर्पण का पात्र ही नहीं समझता।"

अंतिम वाक्य में यद्यपि आत्मकथा है किन्तु इसे निबंध न कह कर साधारण सा विचार या सूचना की बात ही कहना अधिक संगत होगा।

यही बात 'विचार विमर्श' नामक संग्रह में जिस आधार पर लेखों का वर्गीकरण किया गया है, उससे भी स्पष्ट होती है। इस में आठ खण्ठों में द्विवेदी जी के १८१ लेख संग्रहीत हैं। उन आठ खण्डों के नाम ये हैं:—

साहित्य खंड, पुरातत्व खंड, पुस्तकपरिचय खंड, चरितचर्चा खंड।

विज्ञान खंड, आलोचना खंड, विवेचना खंड और प्रकीर्ण खण्ड।

उपर्युक्त समस्त विवेचना से द्विवेदी जी के एकपक्षीय महत्व से ही हम परिचित होते हैं। यह भी हो सकता है कि इतने से उनके विषय में यह धारणा बन जाय कि उन्होंने गंभीर या प्रौढ़ लेख लिखे नहीं। यह बात नहीं है, उन्होंने अच्छे निबंध भी लिखे हैं किन्तु अत्यल्प संख्या में। 'रसज्ञरंजन' में जो नौ लेख संगृहीत हैं वे पर्याप्त मात्रा में सुरुचिपूर्ण, साहित्यिक एवं सुन्दर हैं।

"एक एक सीधी बात कुछ हेर फेर-कहीं कहीं केवल शब्दों के ही—के साथ पाँच छः तरह से पाँच छः वाक्यों में कही हुई मिलती है। उनकी यही प्रवृत्ति उनकी गद्य शैली निर्धारित करती है।" उनके लेखों में छोटे छोटे वाक्यों का प्रयोग अधिक मिलता है।

विनोद और मनोरंजन की मात्रा जिन निबंधों में प्रधान है उनकी भाषा सरल एवं व्यावहारिक है उनमें व्यंग्य के छींटे भी मिलते हैं और भिन्न भिन्न भाषाओं के प्रचलित शब्दों को निःसंकोच ग्रहण भी किया गया है। भाषा शुद्ध एवं व्याकरण-सम्मत तो है ही। कुछ मुहावरे भी यथास्थान प्रयुक्त हुए हैं। इसके विपरीत गंभीर एवं चिंतनसापेक्ष विषयों पर लेखनी चलाते समय संस्कृत तत्सम शब्दों की संख्या भाषा में बढ़ जाती है और एक ही बात की व्याख्या के रूप में उसके आगे के कुछ वाक्य लिखे जान पड़ते हैं।

— —

# द्विवेदी-काल के अन्य लेखक

द्विवेदी जी के बाद पं० माधव प्रसाद मिश्र एक अच्छे निबंधकार कहे जा सकते हैं। इन्होंने "सुदर्शन" नामक एक पत्र निकाला था जो सवा दो वर्ष चलकर बंद हो गया। इसमें कभी-कभी जोश में आकर यह बड़े ही गंभीर एवं शक्तिशाली लेख लिखते थे। अनेक लेख सनातनधर्म के प्रतिपादन एवं उसके विरोधियों तथा विपक्षियों के खण्डन में लिखे गए थे। "इसके अतिरिक्त पाश्चात्य संस्कृताभ्यासी विद्वान् जो कुछ कच्चा पक्का मत यहाँ के वेद, पुराण, साहित्य, आदि के संबंध में प्रकट किया करते थे, वे इन्हें खल जाते थे और उनका विरोध ये डटकर करते थे। उस विरोध में तर्क आवेश और भावुकता सब का एक अद्भुत मिश्रण रहता था। 'वेवरकाभ्रम' इसी झोंक में लिखा गया था।......'सुदर्शन' में इनके लेख प्रायः सब विषयों पर निकलते थे जैसे पर्व त्योहार, उत्सव, तीर्थस्थान, यात्रा, राजनीति इत्यादि।"

स्व० मिश्रजी के सब प्रकार के लेख इण्डियन प्रेस से प्रकाशित 'माधव मिश्र निबंधमाला' में संगृहीत हैं। पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'विचार विमर्श' के समान इस पुस्तक में मिश्र जी के लेखों को भी आठ खण्डों में वर्गीकृत करके रखा गया है। उनके नामों से यह स्पष्ट पता चलता है कि मिश्रजी की प्रतिभा बहुमुखी थी और वे प्रायः किसी भी प्रकार के विषय पर लेखनी चला सकते थे। वे आठ खण्ड ये हैं :—

जीवन चरित्र, पुरातत्व, पर्व या त्योहार, साहित्य, राजनीति, स्थान वर्णन और भ्रमण वृत्तांत, धर्म-चर्चा और आन्दोलन, तथा कहानियाँ।

कुछ लेखों के नाम विषय को और भी स्पष्ट कर देंगे। जैसे राम-लीला, व्यास पूर्णिमा, हिन्दी भाषा, काव्यालोचना, स्वदेशी, आन्दोलन, अयोध्या, सिमलायात्रा, परीक्षा, धृति, क्षमा, होली, बड़ा बाजार किन्तु "लोक सामान्य स्थायी विषयों पर मिश्रजी के केवल दो लेख मिलते हैं—'धृति', 'क्षमा'।" वैसे तो 'परीक्षा' 'होली' आदि अन्य भी कतिपय लेख निबंध कोटि में रखे जा सकते हैं। यहाँ पर परीक्षा से थोड़ा सा अंश उद्धृत किया जाता है।

"वह बड़भागी धन्य है जिसका कभी इस तीन अक्षर के शब्द से काम न पड़े, अपना भरम लिये मुँदी भलमंसी के साथ जीवन के दिन पूरे कर दे। परीक्षा वह चीज़ है, जिसके नाम से देवता और ऋषि मुनि भी काँप उठे हैं, हमारे जैसे साधारण मनुष्यों की सामर्थ्य ही कितनी है जो इसके सामने पैर जमा सकें।"

मिश्रजी का प्रस्तुत अवतरण हमें सहसा पं० प्रताप नारायण मिश्र की शैली की स्मरण करा देता है।

मिश्र जी के ही समकालीन गहमर निवासी बा० गोपालराम जी भी कुछ साधारण निबंध या लेख सामयिक पत्र पत्रिकाओं में लिख दिया करते थे। उनके निबंधों के विषय में पं० रामचन्द्र जी शुक्ल का कथन है "विलक्षण रूप खड़ा करना उनके निबंधों की विशेषता है। किसी अनुभूत बात का चरम दृश्य दिखाने वाले ऐसे विलक्षण और कुतूहल जनक चित्रों के बीच से वे पाठक को ले चलते हैं कि उसे एक तमाशा देखने का सा आनंद आता है।" 'ऋद्धि और सिद्धि' के समान उनके दो एक लेख यद्यपि अच्छे बन पड़े हैं, किन्तु उनका प्रधान क्षेत्र निबंध-रचना न होकर उपन्यास लिखना था अतः अब एक अच्छे निबंध लेखक बा० बालमुकुंद गुप्त का वर्णन किया जायगा।

गुप्त जी हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं के अच्छे लेखक थे। पहले वे उर्दू के दो पत्रों का संपादन करते थे, बाद में भारतमित्र के

संपादक हो गये। अतः उनके लेखों और निबंधों की भाषा बड़ी प्रवाह-मयी, मुहावरेदार तथा व्यावहारिक होती थी। विनोद की मात्रा गुप्त जी के अधिकांश लेखों में रहती थी। 'शिव शंभु का चिट्ठा' तो प्रसिद्ध ही है। इन्होंने पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी के विरुद्ध 'आत्माराम के नाम से कुछ व्यंग्यपूर्ण लेख लिखे थे। "राष्ट्र निर्माण और साहित्य" नामक लेख भी अच्छा बन पड़ा है। इनके निबंधों का संग्रह 'गुप्त निबं-धावली' के नाम से प्रकाशित हुआ है।

पं० गोविन्द नारायण मिश्र का उल्लेख पहले भी हो चुका है. किन्तु उनकी वास्तविक शैली एवं महत्व गुप्त जी के रचना-काल के ही आस पास प्रस्फुटित होते हैं। ये अपनी अनुप्रासप्रियता, संस्कृत के तत्सम शब्दों का बाहुल्य तथा काव्यमयी कल्पनाओं के लिए ही अधिक प्रसिद्ध हैं—कदाचित् इसी अभिरुचि के कारण मिश्र जी ने बाणकृत 'कादम्बरी' की शैली पर एक पुस्तक ही हिन्दी गद्य में लिखने की सोची; उसका श्री गणेश "कवि और चित्रकार" के नाम से हो गया था किन्तु वह अपूर्ण ही रहा।

इनके निबंधों का एक संग्रह "गोविंद निबंधावली" के नाम से प्रकाशित हुआ है। उसमें उपरि निर्दिष्ट 'कवि और चित्रकार' भी वैसा अपूर्ण ही संगृहीत है तथा स्वयं सारस्वत ब्राह्मण होने के कारण सार-स्वत ब्राह्मणों का एक लंबा चौड़ा सा विवरण भी है, जो प्रायः एक छोटी सी पुस्तक ही कही जा सकती है। इन दो लेखों के अतिरिक्त दो बड़े लंबे लंबे लेख 'प्राकृत विचार' तथा 'विभक्ति विचार' नाम से हैं। यह भी लेख तो क्या छोटी-मोटी पुस्तकें ही हैं। उनका प्रारंभ तथा अंत पुस्तक के समान है। (दूसरे लेख में तो 'परिशिष्ट' तक दिया गया है)। इनके अतिरिक्त द्वितीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन में दिया हुआ भाषण तथा 'आत्माराम की टें टें'—ये दो लेख और हैं। दूसरा तो बा० बालमुकुंद गुप्त के 'आत्माराम' का उत्तर है, जिसमें द्विवेदी जी

का पक्षसमर्थन कर गुप्त जी को खोटी खरी सुनाने का प्रयत्न है।

इन लेखों की सूची से ही यह स्पष्ट है कि यह अच्छे निबंध नहीं कहे जा सकते हैं, हाँ अपने प्रगाढ़ पाण्डित्य, गंभीर अध्ययन एवं एक पत्थर तोड़ शैली के लिये वे अवश्य चिरस्मरणीय रहेंगे। संस्कृत के प्रसिद्ध लेखक बाण और दण्डी के समान इनकी शैली भी काव्य और अलंकार की छटा दिखाने वाली लंबे-लंबे समासों से युक्त शैली है। संस्कृत के तत्सम शब्द ही नहीं, ब्रजभाषा के भी अनेक शब्द रहते हैं। किसी किसी निबंध में अपेक्षातर सरल शैली का भी प्रयोग हुआ है। इस कृत्रिम एवं आडंबर पूर्ण भाषा के कारण भावों की जटिलता और दुरूहता इनकी रचना में अधिक आ गई है। मिश्र जी व्यर्थ में ही संस्कृत शब्दों का पुछल्ला बढ़ा देते हैं—यथा समुचित, समुत्पन्न, प्रपीड़ित, सुकठिन आदि, तथा सुकरता, समीपता, ऋजुता को सौकर्य, सामीप्य, आर्जव लिखना उन्हें अधिक प्रिय था। मिश्री जी के निबंध विचार-प्रधान ही कहे जायँगे।

---

# द्विवेदी-युग के शेष लेखक

मिश्र जी के समकालीन ही बा० श्मामसुंदरदास तथा पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्याय के नाम भी उल्लेखनीय हैं। उपाध्याय जी ने निबंधों की कोई विशेष रचना नहीं की, केवल 'प्रिय प्रवास' और 'रस कलश' की भूमिकाएँ तथा किसी सामयिक पत्रिका में लिखा हुआ कभी आध कोई लेख ही इनकी गद्य-रचना या निबंध-रचना के अंतर्गत लिये जा सकते हैं। उपाध्याय जी प्रधानतया "हरिऔध" हैं, अतः उनके गद्य में भी कवित्व, कल्पनाएँ एवं शब्दजाल अधिक मिलता है। इस दृष्टि से अयोध्यासिंह जी पं० गोविन्द नारायण के अधिक निकट हैं, परन्तु बा० श्यामसुंदरदास जी के साथ बात कुछ भिन्न है। उन्होंने स्वयं भी कई अच्छे अच्छे लेख लिखे और दूसरों को भी लिखने के लिये प्रेरित किया। किन्तु इससे भी बड़ा जो उनका कार्य है, वह है निबंधों का संपादन। हिन्दी निबंधमाला दो भाग, तथा गद्य रत्नावली में लगभग ३० बहुत अच्छे निबंध हैं। इन संग्रहों से एंट्रेंस, एफ. ए. बी. ए. की परीक्षाओं में हिन्दी गद्य से, विशेषतः निबंध साहित्य से, विद्यार्थियों को परिचित कराने का काम चलता है, उक्त संग्रहों में ही आपके अपने भी दो तीन बड़े सुन्दर लेख हैं। स्वयं रचित पुस्तकों में से 'भाषा विज्ञान' 'साहित्यालोचन' 'हिन्दी भाषा और साहित्य'—इन तीन पुस्तकों के द्वारा श्याम सुंदर दास जी ने हिन्दी में इन अंगों के अभाव की पूर्ति की, और यह एक उनका अमर कार्य है।

उक्त बाबू साहब की शैली शुद्ध भाषा के लिये प्रसिद्ध है। वे उर्दू अँग्रेजी के शब्दों को नियमित रूप से बचाने का ध्यान रखते हैं फिर भी शैली विशेष दुर्बोध नहीं होती, हाँ जहाँ नवीन विषयों का प्रतिपादन हुआ है वहाँ स्वभावतः कुछ रूक्षता तथा गंभीरता आ गई है।

'उनकी शैली में प्रयत्न की मात्रा अधिक है।'

तदनंतर पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का नाम भी हिन्दी-निबंध के क्रमिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। श्री गुलेरी जी के निबंध अधिक नहीं मिलते हैं, किन्तु जो लेख प्राप्त हैं, वे नितांत प्रौढ़, परिमार्जित एवं पूर्णतया साहित्यिक कोटि के हैं। शर्मा जी 'समालोचक' नामक एक पत्र के संपादक भी थे। "उक्त पत्र द्वारा गुलेरी जी एक बहुत ही अनूठी शैली लेकर साहित्य क्षेत्र में उतरे थे। ऐसा गंभीर पांडित्य पूर्ण हास, जैसा इनके लेखों में रहता था, और कहीं देखने में न आया।" 'कछुआधरम' 'मारेसि मोंहि कुठाऊँ' नामक दो निबंध तो बड़े ही प्रसिद्ध हैं और गुलेरी जी के निबंधों के उदाहरण के रूप में दिये जाते हैं। 'संगीत' भी एक अच्छा निबंध है। इस प्रकार के सामाजिक तथा आलोचनात्मक लेखों के अतिरिक्त गुलेरी जी ने साहित्यिक एवं ऐतिहासिक लेख भी लिखे हैं। इनके अधिकांश लेखों में इनका व्यक्तित्व इतना स्पष्ट झलकता है, कि हम इन्हें भी एक उत्कृष्ट कोटि का निबंधकार कह सकते हैं। क्या भाषा की दृष्टि से, क्या भाव की दृष्टि से, क्या आत्मीयता के नाते, क्या व्यक्तित्व के नाते पं० चंद्रधर शर्मा गुलेरी अपने समकालीन सभी निबंध लेखकों से उच्चतर आसन पर आसीन थे। उनके 'कछुआधरम' से उदाहरण दिया जाता है।

"किसी बात का टोटा होने पर उसे पूरा करने की इच्छा होती है, दुख होने पर उसे मिटाना चाहते हैं। यह स्वभाव है। संसार में त्रिविध दुःख दिखाई पड़ने लगे। उन्हें मिटाने के लिये उपाय भी किये जाने लगे। 'दृष्ट' उपाय हुए। उनसे संतोष न हुआ तो सुने सुनाये (आनुश्रविक) उपाय किये। उनसे भी मन न भरा। सांख्यों ने काठ कड़ी गिन गिन कर उपाय निकाला, बुद्ध ने योग में पक कर उपाय खोजा। किसी न किसी तरह कोई उपाय मिलता गया। कछुओं ने सोचा, चोर को क्या मारे, चोर की माँ को ही न मारे। न रहे

बाँस न बजे बाँसुरी। लगीं प्रार्थनाएँ होने—

"मा देहि राम ! जननी जठरे निवासम्"

"यह बेधड़क कहा जा सकता है कि शैली की जो विशिष्टता और अर्थ-गर्भित वक्रता गुलेरीजी में मिलती है वह और किसी लेखक में नहीं। इनके स्मित हास की सामग्री जीवन के क्षेत्रों से ली गई है। अतः इनके लेखों का पूरा आनंद उन्हीं को मिल सकता है जो बहुज्ञ या कम से कम बहुश्रुत हैं।"

गुलेरी जी के समान प्रौढ़ता तथा साहित्यिकता में यदि कोई उनके टक्कर का था, तो वह सरदार पूर्णसिंह ही थे। यद्यपि सरदार जी ने भी अधिक नहीं लिखा, केवल पाँच छः लेख—'आचरण की सभ्यता', 'मज़दूरी और प्रेम' 'सच्ची वीरता' 'पवित्रता', 'कन्यादान' 'नयनों की गंगा' आदि ही 'सरस्वती' के प्रारम्भिक दिनों में निकले थे। उक्त सभी लेखों में शब्द चयन का चमत्कार तथा प्रतिभा का परिचय तो मिलता ही है, भावव्यंजना तथा भाषा की लाक्षणिकता भी अनूठी है। हाँ आत्म कथा-कथन की अभिरुचि (egoism) अवश्य पूर्ण जी में नहीं है।

पूर्ण सिंह जी के ही समकालीन पं० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी भी निबंध लेखकों में अच्छा स्थान रखते हैं। पण्डित जी ने अधिकांश लेख निबंधों के उदाहरण की दृष्टि से लिखे, इसीलिये वे निबंध प्रारंभिक शिक्षावाले विद्यार्थी के चाहे जितने लाभ के हों, उनमें प्रौढ़ता एवं साहित्यिकता नहीं मानी जा सकती। चतुर्वेदी जी ने स्कूल की भिन्न भिन्न कक्षाओं के लिये पाठ्य् पुस्तकों के रूप में ही अधिक रचना की है। 'हिन्दीनिबंधशिक्षा' 'प्रबंधरचनाशैली' इसी प्रकार की पुस्तकें हैं। कभी आध उच्च कोटि के निबंध भी लिखे गए थे। किन्तु वे तभी अच्छे बन पड़ते थे जब पाठ्य् पुस्तकों की क्रमिक लेखन-परिधि के बाहर रहकर स्वतंत्र प्रेरणा से चतुर्वेदी जी लिखते थे।

यहीं पर दूसरे चतुर्वेदी जी, कई सम्मेलनों के सभापति, पं० जगन्नाथप्रसाद जी का भी नामोल्लेख सामयिक होगा। इनकी अधिकांश रचनाएँ हास्यात्मक एवं विनोद और मनोरंजन पूर्ण ही हैं। इनकी दूसरी विशेषता है एक व्याख्यानात्मक ढंग में कुछ लेख लिखना जो हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कई अधिवेशनों के सभापति के स्तर से पढ़े गए थे।

इनसे पूर्व जैसे पं० बालकृष्ण भट्ट ने 'ल' या पं० प्रताप नारायण मिश्रने 'ट' तथा 'त' शीर्षक से ही निबंध लिख डाले थे वैसे ही (कदाचित उसी अनुकरण पर) इन्होंने 'ब की बहार' दिखाई। पं० जी ने 'गद्यमाला' नामक पुस्तक में छः प्रसून गूँथे हैं, उनके नाम हैं विनय प्रार्थना, समाज, भाषा और साहित्य, वाणिज्य व्यापार, हँसी मज़ाक तथा विविध। इनमें ३३ लेख हैं किन्तु प्रायः सभी साधारण कोटि के हैं। एक भाव को हृदयंगम कर अन्य भावों की उत्तेजना प्रदान करने वाले, या लेखक के व्यक्तित्व से ही विशेष परिचय कराने वाले लेख कोई नहीं हैं, यों 'म' 'पिक्चर पूजा' 'बड़प्पन'—ये तीन चार लेख अच्छे हैं।

इस सामग्री के अतिरिक्त एक पुस्तक और है जिसमें चतुर्वेदी जी के पाँच लेख तथा दो भाषण संकलित हैं, इसका नाम है "निबंध निचय"। नाम से पाठक यह समझ सकते हैं कि इसमें न मालूम किस उच्च कोटि के और कितने निबंध हैं, किन्तु बात ऐसी नहीं है। संख्या ऊपर दी ही जा चुकी है, निबंधों के विषय शीर्षक अथवा नाम तो हैं 'हिन्दी की वर्तमान अवस्था' 'अनुप्रास का अन्वेषण' 'हमारी शिक्षा किस भाषा में हो' 'सिंहावलोकन' तथा 'हिन्दी लिंग विचार'। किन्तु ये नाम भी एक प्रकार से भ्रम में ही रखते हैं। वास्तव में ये सभी पन्द्रह-पन्द्रह बीस-बीस पृष्ठ के व्याख्यानात्मक लेख हैं जो क्रमशः

द्वितीय, षष्ठ, सप्तम, अष्टम तथा नवम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में सभापति के पद से अथवा ऐसे ही पढ़े गए थे। अतः ये भी हमारे क्षेत्र से बाहर ही हैं। वैसे चतुर्वेदी जी के अन्य लेखों से ये लेख या भाषण साहित्यिक निबंध के अधिक निकट पहुँचते हैं।

---

# आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल

हिन्दी के निबंध साहित्य का दूसरा युग जो द्विवेदी जी के साथ आरम्भ हुआ था, लगभग यहीं पर समाप्त हो जाता है; तीसरा और अंतिम युग का प्रवर्तन होता है श्रीयुत पं० रामचन्द्र शुक्ल से। वे पश्चिम के प्रौढ़ातिप्रौढ़ निबंधकारों से टक्कर ले सकते हैं।। वास्तव में हिन्दी साहित्य को शुक्ल जी के निबंधों पर ही गर्व है। उन्होंने करुणा, लोभ और प्रीति, क्रोध आदि के समान भावात्मक विषयों पर ऐसी सूक्ष्म दृष्टि से विवेचना करते हुए लिखा है कि यही कहते बनता है कि निबंध—विशेषतः विचारात्मक—अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है। रस्किन तथा वेकन को गंभीरता तथा दार्शनिकता के कारण जो स्थान अँग्रेजी साहित्य में प्राप्त है, हिन्दी साहित्य में शुक्ल जी भी उसी के अधिकारी हैं। उनका सूत्ररूप में लिखित प्रत्येक वाक्य यत्र तत्र साहित्य के प्रायः सभी क्षेत्रों में बड़े गर्व के साथ उद्धृत किया जाता है। प्रस्तुत प्रयास में ही न जाने कितने स्थानों पर परोक्ष एवं प्रत्यक्ष रूप से उनके शब्द तथा भाव गृहीत हैं। आलोचनात्मक प्रणाली पर लिखा हुआ कदाचित् ही कोई ग्रंथ या लेख लिखा जाता हो जिसमें शुक्ल जी का आधार न लिया जाता हो। उन्होंने स्वयं भी सूर, तुलसी तथा जायसी पर विस्तृत समालोचनाएँ लिखीं हैं इन्हें वे स्वयं भी निबंध ही मानते हैं, जैसा कि उनके इस कथन से व्यक्त है :—

"इस संग्रह में भ्रमरगीत के चुने हुए पद रखे गए हैं। पाठ जहाँ तक हो सका है शुद्ध किया गया है। कठिन शब्दों और वाक्यों के अर्थ फुटनोट में दे दिये गए हैं। सूरदास जी पर एक आलोचनात्मक निबंध भी लगा दिया गया है, जिसमें उनकी विशेषताओं के अन्वेषण का कुछ प्रयत्न है।"

('वक्तव्य'— भ्रमर गीतसार से)

शुक्ल जी का लेखसंग्रह विचार वीथी, चिंतामणि एवं त्रिवेणी इन तीन नामों से प्रकाशित हुआ है। प्रथम में १३ निबंध हैं। भाव मनोविकार, उत्साह, श्रद्धा भक्ति, करुणा, लज्जा और ग्लानि, लोभ और प्रीति, घृणा, ईर्षा, भय, कविता क्या है, क्रोध, भारतेन्दु हरिश्चंद्र और तुलसी का भक्तिमार्ग। चिंतामणि में ये तेरह निबंध तो संगृहीत ही हैं, निम्नलिखित चार निबंध और नये हैं :—मानस की धर्मभूमि, काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था, साधारणीकरण और व्यक्तिवैचित्र्यवाद, तथा रसात्मक बोध के विविध रूप।

आलोचनात्मक लेख तो शुक्ल जी से पहले बहुत ही कम लिखे जाते थे। जो लिखे भी गये वे नितांत शिथिल एवम् पल्लवस्पर्शी होते थे, वे गंभीर अध्ययन के परिचायक, या कवि के सूक्ष्म विचारों से पाठक के हृदय का सामंजस्य स्थापित करने वाले नहीं रहते थे। अतः शुक्ल जी ने सच्ची आलोचना का बीजवपन ही नहीं किया वरन् उसे पल्लवित तथा पुष्पित तक कर दिया। इनकी संयत और विशद-विवेचना-समन्वित शैली अपनी ही है। उस पर उनके व्यक्तित्व तथा तदन्तर्गत गंभीरता दोनों की स्पष्ट छाप है। यों तो उनके लेखों से सभी साहित्य प्रेमी परिचित होंगे, फिर भी उनके 'उत्साह' से थोड़ा सा भाग दिया जाता है।

"दुःख के वर्ग में जो स्थान भय का है, आनंदवर्ग में वही स्थान उत्साह का है। भय में हम प्रस्तुत कठिन स्थिति के निश्चय से विशेष रूप में दुखी और कभी कभी उस स्थिति से अपने को दूर रखने के लिए प्रयत्नवान् होते हैं। उत्साह में हम आने वाली कठिन स्थिति के भीतर साहस के अवसर के निश्चयद्वारा प्रस्तुत कर्मसुख की उमंग में अवश्य प्रयत्नवान् होते हैं। उत्साह में कष्ट या हानि सहने की दृढ़ता के साथ साथ कर्म में प्रवृत्त होने के आनंद का योग रहता है। साहस-

पूर्ण आनंद की उमंग का नाम उत्साह है। कर्म-सौंदर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं।

शुक्ल जी की शब्दावली संस्कृत तत्सम शब्दों से अधिकांश परि-पूर्ण है। प्रचलित उर्दू शब्द, कुछ व्यावहारिक एवं पारिभाषिक शब्द तथा यत्र तत्र अँग्रेजी शब्दों का भी (उनके द्वारा भावों में प्राबल्य लाकर अधिक प्रभावोत्पादक बनाने के लिए) प्रयोग हुआ है। यह उपर्युक्त शब्दों के संगठन का अनुपात, विषय-प्रतिपादन एवं भावों के अनुसार न्यूनाधिक भी होता रहता है। इसी कारण भाषा दुरूह न होकर अधिकांश स्थलों में बोधगम्य ही रही है।

भाषा और भाव का एक बड़ा सुन्दर तथा सुरुचिपूर्ण सामंजस्य शुक्ल जी के लेखों में हुआ है। सभी निबंध गंभीर चिंतन, विस्तृत अध्ययन और व्यापक अनुभव के फल हैं। उनमें विचारों को ठूँस ठूँस कर भरा गया है। किसी किसी बात को समझाने के लिए शब्दांतरसे पुनरुक्ति भी मिलती है। भाषा सर्वत्र व्याकरणसम्मत तथा शुद्ध है।

इस युग के अन्य निबंध लेखकों का जो वर्णन नीचे दिया जा रहा है वे प्रायः समकालीन हैं। इस युग की परिधि वर्तमान समय क्या बिलकुल आज तक है। अभी सब लेखक लिख ही रहे हैं क्योंकि पं० पद्मसिंह शर्मा, मुं० प्रेमचंद, तथा श्री जयशंकर प्रसाद जी को छोड़ कर सभी लेखक जीवित हैं। उनकी नवीन रचनाएँ तथा लेख आदि निकलते जा रहे हैं और आज कल की किसी भी मासिक पत्रिका में दो एक मिल सकते हैं, अतः उनका विवेचन काल-निरपेक्ष किया जायगा। उपर्युक्त दिवंगत लेखकों की चर्चा के अनंतर जीवित लेखकों का वर्णन होगा।

स्वर्गीय लेखकों में स्वभावतः सब से पहले हमारा ध्यान पं० पद्म-सिंह शर्मा की ओर जाता है। इनके वास्तविक निबंध कम हैं, किन्तु इनकी अपनी शैली तथा समालोचना प्रणाली ऐसी सब से अलग है,

कि इनके नाम की उपेक्षा नहीं की जा सकती। 'हिन्दी उर्दू और हिन्दुस्तानी' पर लिखा गया तथा पढ़ा गया भाषण प्रसिद्ध ही है। यह यद्यपि शुद्ध निबंध कोटि में नहीं रखा जा सकता, किन्तु लेख अच्छा है, इस कथन में तो कोई संदेह का स्थान ही नहीं।

शर्मा जी के लेख 'सरस्वती' 'विशालभारत' 'माधुरी' 'भारतोदय' आदि सामयिक पत्रिकाओं में निकला करते थे। उन्हीं में से २२ लेखों का संग्रह 'पद्मपराग' के नाम से निकला है। इसमें अधिकांश तो प्रसिद्ध पुरुषों की जीवनियाँ हैं, जैसे भीमसेन शर्मा, दयानंद सरस्वती, मन्सूर, मौ० आज़ाद आदि। दो भाषण भी हैं जो हिन्दी साहित्य सम्मेलन के दो अधिवेशनों पर दिये गए थे। इनके अतिरिक्त दो चार साधारण लेख भी हैं। इसी प्रकार एक दूसरे लेखसंग्रह का नाम है प्रबंध मंजरी, परन्तु इसके दर्शन का सौभाग्य मुझे प्राप्त न हुआ।

शर्मा जी संस्कृत वाक्य विन्यास के साथ साथ अनेक अँग्रेज़ी शब्द भी प्रयुक्त करते चलते हैं। उर्दू के तो पूरे विद्वान् होने के कारण फारसी के तत्सम शब्दों की भरमार रहती है। ग्रामीण मुहावरों और शब्दों का भी प्रयोग निःसंकोच हुआ है। किसी किसी निबंध में तो उर्दू के शैर और संस्कृत के श्लोक आदि इतने आ गये हैं कि साधारण विद्या-बुद्धि का मनुष्य उससे कोई लाभ ही नहीं उठा सकता। शर्मा जी की भाषा प्रायः बड़ी अनियंत्रित एवं असंयत है। यत्र तत्र जहाँ भावाधिक्य है वहाँ की भाषा भी कुछ कम असंयत है।"

शर्मा जी के उपरांत श्री जयशंकरप्रसाद जी का नाम महत्व पूर्ण है। किन्तु प्रसाद जी का मुख्य क्षेत्र है कविता तथा नाटक। या तो उनका लक्ष्य, उनका परिश्रम, उनका ध्यान, सब कुछ इतिहास के धुंधले पृष्ठों का अध्ययन कर नाटक लिखने में लगा था, या फिर 'रहस्यवाद' के ढंग की कविता करने में। प्रसाद जी का व्यक्तित्व इन्हीं दो स्तंभों पर आधारित था, अतः उनके निबंध भी या तो नाटक

संबंधी विचारों का प्रकाशन करते हैं, अथवा 'छायावाद' 'आदर्श-वाद' 'रहस्यवाद' आदि किसी 'वाद' के विवाद में या प्रतिवाद में लिखे गए हैं। उनके कतिपय निबंध 'हंस' 'माधुरी' आदि पत्रिकाओं में भी निकले थे, परन्तु अब वे पुस्तकाकार होकर 'काव्य और कला तथा अन्य निबंध' नाम से लीडर प्रेस प्रयाग से प्रकाशित हो चुके हैं। इन लेखों के नाम इस लिये नीचे दिये जा रहे हैं जिससे हमारे ऊपर के कथन का समर्थन भी हो सके और प्रसाद जी के निबंधों के विषय तथा विस्तार का भो अनुमान किया जा सके।

"आदर्शवाद और यथार्थवाद" "यथार्थवाद और छायावाद" "नाटकों का आरंभ" "नाटकों में रस का प्रयोग" "रहस्यवाद" "रंगमंच" "रस" "काव्य और कला"।

उक्त पुस्तक के प्राक्कथन के प्रथम दो वाक्य हमारे विषय से विशेष सम्बन्ध रखते हैं, अतः वे अविकल दिये जाते हैं:—

"प्रसाद जी हिन्दी के युग प्रवर्तक कवि और साहित्यस्रष्टा तो थे ही, एक असाधारण समीक्षक और दार्शनिक भी थे। बुद्ध, मौर्य और गुप्तकाल के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक अन्वेषणों पर प्रसाद जी के निबंध पाठक पढ़ चुके हैं।"

प्रसाद जी की भाषा एकपक्षीय है। उसमें संस्कृत की तत्सम शब्दावली इतनी रखी गई है कि साधारण पाठक के लिये दुरूह ही नहीं, शुष्क और अव्यावहारिक सी लगने लगती है। विदेशी शब्दों को तो भूलकर भी उन्होंने अपनी रचनाओं के पास फटकने नहीं दिया। उसमें लेखक की दार्शनिकता और उत्कृष्ट चिंतनशीलता आभासित होती है। इसीलिए वे मनोरंजन की वस्तु कम हैं, शुद्ध साहित्य की अधिक। हाँ, शैली में पूर्ण मौलिकता है और उसमें लेखक का व्यक्तित्व सन्निहित है। अत्यन्त वर्णनात्मक स्थलों में कभी कभी कुछ सरलता भी दृष्टिगोचर हो जाती है।

श्री जयशंकर प्रसाद जी के समकालीन, उसी नगर के रहने वाले और प्रसादजी के नाटकों में युगान्तर उपस्थित करने के समान ही अपने क्षेत्र—उपन्यास और कहानी—में एक नवीन युग की स्थापना करने वाले मुं० प्रेमचन्द जी के निबंधों की चर्चा भी इसी स्थल पर अधिक उपयुक्त होगी। प्रसाद जी के ही समान प्रेमचन्द जी के भी अधिक गद्य लेख नहीं हैं। इन्होंने भी यद्यपि अपने मुख्य क्षेत्र से संबंध रखने वाले कुछ विचार ही प्रकट किये हैं, तथापि उनकी संख्या प्रसाद जी के निबंधों से अधिक है; और यदि केवल निबंध के ही दृष्टिकोण से तुलना की जाय, तो प्रेमचंद जी प्रसाद जी से श्रेष्ठ ठहरेंगे। उनके लेख स्वसंपादित 'हंस' में तो प्रमुखतया रहते ही थे, कभी कभी 'माधुरी' के सदृश किसी सामयिक पत्रिका में भी दो-एक निबंध भेज देते थे। उनके निबंधों तथा लेखों के तीन संग्रह भी निकल चुके हैं।

पहली पुस्तक है "कुछ विचार'। इसमें ग्यारह सुन्दर निबंध हैं और वे हैं

"साहित्य का उद्देश्य" "कहानी कल्प—तीन लेख," "उपन्यास," "उपन्यास का विषय" "एक भाषण" "जीवन में साहित्य का स्थान" "उर्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तानी" "राष्ट्रभाषा हिन्दी और उसकी कुछ समस्यायें" "कौमी भाषा के विषय में कुछ विचार"। इन निबंधों में यद्यपि पाश्चात्य दृष्टि कोण से निबंध की परिभाषा चरितार्थ करने पर असफल प्रयत्न ही रहना पड़ेगा, तथापि आजकल 'निबंध' शब्द जिस भाव या अर्थ का द्योतक है, उस दृष्टि से ये अत्यन्त उत्कृष्ट हैं।

दूसरी पुस्तक 'कलम, तलवार और त्याग' में २२ लेख या जीवनियाँ संकलित हैं। प्रथम संग्रह में प्रारम्भ के "दो शब्द" शीर्षक के अंतर्गत प्रेमचंद जी के वाक्य भी बड़े महत्वपूर्ण हैं।

"इस भाग में साहित्य और भाषा संबंधी विचार ही एकत्रित किये गये हैं।"

# अन्य आधुनिक लेखक

मु० प्रेमचंदजी के उपरांत अब जीवित लेखकों का वर्णन प्रसंगगत है उसमें पहले श्री रायकृष्णदास जी का नाम लिया जा सकता है। उनके लेख छोटे छोटे रहस्यात्मक ढंग से लिखे हुए गद्य काव्य के उदाहरण ही कहे जा सकते हैं। अतः साहित्यिक निबन्धों की दृष्टि से उनका विशेष महत्व नहीं है। ये लेख पाँच पुस्तकों में प्रकाशित हुए हैं— साधना, संलाप, पगला, छायापथ और प्रवाल। इनमें 'साधना' अधिक प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त राय कृष्णदास के दो एक निबंध यत्र तत्र संगृहीत अवश्य मिल जाते हैं, जैसे श्यामसुन्दर दास द्वारा संपादित 'गद्य रत्नावली' में 'बीज की बात' और हिन्दी निबंध माला भाग १ में 'धीर' ये शुद्ध तथा उत्कृष्ट निबंध हैं।

तदनंतर राय कृष्णदास जी से मिलते हुए एक भक्त कवि तथा लेखक—वियोगीहरि—का नाम आता है। वियोगी हरिजी एक बड़े ही भावुक कवि, साहित्य प्रेमी, तथा मातृभाषा के अनन्य सेवी भक्त हृदय पुरुष हैं। आपकी गद्य शैली पं० गोबिन्द नारायण मिश्र के 'कवि और चित्र-कार' की स्मृति दिलाती है। आपके निबंधों में हृदय का राग और भक्तों की सरसता है 'साधना' "प्रवाल" आदि के समान रहस्यात्मक ढंग के गद्य काव्य की आपकी [1]तीन पुस्तकें 'पगली' 'अन्तरनाद' और 'ठंडे छींटे' प्रकाशित हो चुकी हैं, परन्तु वे लेख निबन्ध-कला को छू तक नहीं जाते। इनका लिखा हुआ 'साहित्य विहार' नाम का ११ लेखों

[1]इनकी 'तरंगिणी' नाम की एक पुस्तक और भी निकली है, परन्तु मुझे देखने को न मिल सकी।

का एक संग्रह और भी मिलता है। इन लेखों में सच्चा मनोराज्य, आँख और हिन्दी कवि, साहित्यिक चंद्रमा, ये ही तीन लेख किसी प्रकार निबंध संज्ञा प्राप्त करते हैं। इनके अतिरिक्त लेख तो 'रंगीला भाव' लिये हुये 'भक्तों के व्यंग्य' आदि ही अधिक हैं।

इसी प्रकार आनन्द भिक्षु सरस्वती द्वारा लिखित एक पुस्तक 'भावना' है। इसमें चालीस लेख हैं। ये सभी यद्यपि ज्ञान वैराग्य' की ओर ले जाने वाले उपदेश पूर्ण लेख ही हैं फिर भी कुछ निबंध-संज्ञा प्राप्त करते हैं यथा गर्व, क्रोध, आशा, अनुभव, कर्तव्य।

जिस प्रकार श्री वियोगी हरि जी प्रमुखतया कवि हैं, किन्तु गौणरूप से कुछ विचारों के प्रकाशनार्थ उन्होंने गद्य-लेख भी लिखे हैं; उसी प्रकार श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' भी हिन्दी के एक प्रतिभावान् एवं उच्चकोटि के कवि हैं किन्तु कवि का भावुक हृदय तथा उसकी सूक्ष्म अन्वीक्षण दृष्टि उसके मन में कुछ न कुछ विचार ऐसे उत्पन्न करते ही रहते हैं, जो प्रकट होने के लिये मार्ग खोजते हैं। उसमें यह आवश्यक नहीं कि कवि जो कुछ कहे, पद्य या कविता में ही कहे—वह अपने विचारों को निबंध का भी रूप दे सकता है। यही स्थिति श्री निराला जी की है। वे एक प्रतिभासंपन्न व्यक्ति हैं अतः जिस पर भी प्रतिभा का प्रकाश डाल देंगे वही तमतोमसे रहित होकर स्वच्छ तथा शुभ्र हो जायगा। उनके अच्छे अच्छे लेख मासिक पत्र पत्रिकाओं में तो निकलते ही रहते हैं—कभी कविता पर, कभी नाटक पर, कभी छायावाद पर, कभी किसी अन्य विषय पर उनके ऐसे ही विचारात्मक लेखों के दो संग्रह भी प्रकाश में आ चुके हैं, 'प्रबन्ध प्रतिमा' और 'प्रबंध पद्म'। दोनों ही सुष्ठु साहित्यिक निबंधों से परिपूर्ण हैं। दूसरी पुस्तक के कुछ प्रमुख लेख ये हैं :—

'शून्य और शक्ति', 'रूप और नारी' 'राष्ट्र और नारी' तथा 'हमारे साहित्य का ध्येय'।

उक्त नामावली से प्रकट है कि निराला जी के निबंध साहित्यिक, दार्शनिक तथा गंभीर विषयों पर ही हैं, लोक सामान्य स्थायी विषयों पर नहीं। इनमें व्यक्तित्व या आत्मकथा न होने के कारण मौन्टेन या लैम्ब की निबंध कल्पना से इनका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता, किन्तु साधारणतया जिस व्यापक अर्थ में निबंध शब्द का प्रयोग होता चला आ रहा है, उस दृष्टि से ये उत्तम कोटि के हैं।

अब हम दो ऐसे निबंध रचयिताओं का वर्णन करेंगे जिन्होंने निबंध लेखन में विशेष हस्त लाघव दिखाया है, इनमें से प्रथम नाम है महाराजकुमार डा० रघुवीर सिंह जी का और दूसरा नाम है प्रोफेसर गुलाबराय एम० ए० का। दोनों ही हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ एवं असाधारण विद्वान् हैं, दोनों ही निबंध की कला से अवगत हैं, तथा दोनों ही के निबंध हिन्दी निबंध साहित्य में एक उच्च स्थान के अधिकारी हैं। उक्त डाक्टर साहब के निबंधों की दो पुस्तकें—'सप्तद्वीप' और 'शेष स्मृतियाँ'—छप चुकी हैं। दूसरे ग्रंथ में 'ताज' 'एक स्वप्न की शेष स्मृतियाँ'; 'अवशेष' 'तीन कब्रें', 'उजड़ा स्वर्ग' ये पांच भावात्मक और कल्पना प्रधान निबंध है, और उसी शैली में लिखी हुई 'शेष स्मृतियाँ' शीर्षक भूमिका भी है। पहली पुस्तक में निम्नलिखित सात निबंध हैं :—

'आधुनिक हिन्दी काव्य', 'वह प्रतीक्षा' 'जब बादशाह खो गया था', 'सेवा सदन से गोदान तक', 'इतिहास शास्त्र', 'शिमला से', 'भारतीय इतिहास में राजपूतों के इतिहास का महत्व।'

इनमें से 'वह प्रतीक्षा' निबंध की दृष्टि से अच्छा है और "सेवा-सदन से गोदान तक' आलोचनात्मक सामग्री के आधार पर एक अच्छा प्रबंध है। तीसरा लेख—जब बादशाह खो गया था—एक कहानी है। 'ताज महल' आपकी श्रेष्ठ रचना है, जो कई पाठ्यपुस्तकों तक में रखी गई है। आपकी शैली में भाव और भाषा का सुन्दर

सामंजस्य हुआ है।

'वह प्रतीक्षा' का थोड़ा सा अंश दिया जाता है :—

"उस आनन्दमयी भावना का वह अदृष्ट किन्तु विमोहक सुदृढ़ आकर्षण ही प्रेम कहाता है। और इसी कारण जहाँ जहाँ सौंदर्य बिखरा पड़ा होता है, आनन्द की तरंगें उठती हैं और उस अनन्त परम आत्मा की प्रेममयी भावनायें उमड़ती हैं। प्रेम का वह अदृष्ट पाश निरंतर उलझा जाता है, अधिकाधिक सुदृढ़ होता जाता है, और जब यह पाश दो आत्माओं में भी देख पड़ते है तब वह सांसारिक प्रेम कहाता है, किन्तु वहाँ भी सौन्दर्य आनन्द और प्रेम तीनों उलझे मिलते हैं और एक ऐसी अनबूझ पहेली पैदा कर देते हैं जिसे कवि भवभूति भी केवल यही कहकर टाल सका कि

'व्यतिषजति पदार्थानन्तरः कोपिहेतुः'

श्री गुलाबराय जी के भी निबंध साहित्य एवं समालोचना की दृष्टि से बड़े ऊँचे पाये के हैं। निबंध में जिस आत्मीयता एवं व्यक्तित्व की आवश्यकता है वह यद्यपि आजकल के निबंधकारों में बहुत ही कम है, परन्तु प्रोफेसर साहब में ये दोनों ही गुण प्रचुर मात्रा में हैं। आपके २१ निबंधों से समन्वित एक पुस्तक 'मेरी असफलताएँ' बड़ी ही सुंदर है। एक कुशल कलाकार, अनुभवी विद्वान एवं प्रोफेसरकी लेखनी से निकले हुए निम्नाङ्कित विषय कितने ही मनोरंजक एवं सुरुचिपूर्ण उतरे हैं, यह पढ़कर ही पूर्णतया विदित हो सकता है। निबंधों के कुछ शीर्षक अधोलिखित हैं।

'मेरा मकान' 'सेवा के पथ पर' 'आप बीती' 'खट्टे अंगूर' 'एक स्केच' आदि।

सभी में आत्मकथा है, छात्र जीवन, बोर्डिङ्ग हाउस इत्यादि के चित्र हैं।

'साहित्य संदेश' में तो आपके अनेक लेख प्रायः निकलते ही रहते

हैं। उनके अतिरिक्त ४५ साहित्यिक निबंधों का एक संग्रह 'प्रबंध प्रभाकर' के नाम से लाहौर से निकला है। इनमें से लगभग दो तिहाई साहित्य एवं काव्य पर ही हैं।

"वर्तमान हिन्दी कविता की प्रगति', "समाज पर साहित्य का प्रभाव" "हिन्दी में हास्य रस" "काव्यकला और चित्रकला", "हिन्दी साहिय में नाटक" "हिन्दी गद्य का विकास" "मातृभाषा का महत्व", "ब्रजभाषा और खड़ी बोली", "गोस्वामी तुलसीदास" "देव और विहारी" इत्यादि।

शेष जो अन्य प्रकार के निबंध हैं उनमें से कतिपय इस प्रकार हैं— 'शिक्षा का ध्येय', 'प्रतिभा का क्षेत्र, 'लोकोपकार और सेवाधर्म, 'ग्राम में वर्षाकालीन शोभा', 'सम्पति का सदुपयोग', 'नागरिक कर्तव्य'।

ऊपर के विषयों की भिन्नता तथा विविधता से इतना तो स्पष्ट ही है कि श्री गुलाबराय जी का सभी क्षेत्रों पर अधिकार है। उनकी प्रतिभा बहुमुखी है और उनका ज्ञान अगाध है। उक्त पुस्तक के प्रारंभ में लेखन कला के संबंध में "कुछ ज्ञातव्य बातें" शीर्षक छोटा सा लेख भी दिया है, जो साधारण विद्यार्थियों के अच्छे काम का है।

पुस्तक के काव्य तथा साहित्य विषयक लेख साधारण समालोचना समन्वित ही हैं, 'निबंधत्व' से अनुप्राणित नहीं परन्तु दूसरे प्रकार के लेख अच्छे हैं। नीचे 'लोकोपकार और सेवाधर्म से' उदाहरण दिया गया है जिससे लेखक की भाव व्यंजना शैली पर ही प्रभूत प्रकाश नहीं पड़ता, उसकी भाषा कितनी परिष्कृत, प्रवाहमयी, शुद्ध एवं उपयुक्त है यह भी हृदयंगम हो जाता है।

"सेवा धर्म द्वारा जितना उपकार उपकृत पुरुष का होता है उससे अधिक उपकार उपकारी का होता है। कर्तव्यपालन और आलस्य त्याग की बड़ी भारी प्रसन्नता होती है। इस प्रसन्नता के अतिरिक्त

मनुष्य में सहृदयता के कोमल भावों की वृद्धि होती है। दया और क्षमा भाव उपकारी और उपकृत दोनों को पवित्र करता है। उदार मनुष्य अपनी आत्मा को विस्तृत रूप में देखने लगता है। जिन लोगों की सेवा की जाती है वे आत्मीय से हो जाते हैं। उदार मनुष्य सच्चा वीर बन जाता है। स्वार्थी मनुष्य कायर होता है। सेवा त्याग का मार्ग है। जो मनुष्य त्याग नहीं कर सकता वह वीर नहीं। इसलिए साहित्य के ग्रंथों में वीर रस के वर्णन में दयावीर और धर्म वीर को भी स्थान दिया गया है। सेवा से विनय भाव बढ़ता है और विनय ही मनुष्यता है...

परहित सरिस धर्म नहिं भाई। परपीड़ा सम नहिं अघ भाई।"

---

# शेष लेखक

इस परिच्छेद में वर्तमान काल के निबंधकारों का वर्णन किया जायगा। गद्य साहित्य के विकास तथा खड़ी बोली के परिमार्जित होने के साथ साथ निबंध भी उन्नति कर रहा है। आधुनिक काल में अनेक लेखक हैं, कुछ की रचना मात्रा में अधिक है, कुछ की मूल्य में इनकी रचनाएँ पुस्तकाकार अथवा पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हो चुकी हैं और अभी भी हो रही हैं। दो एक को छोड़ कर इनकी अपनी कोई विशिष्ट शैली निर्धारित नहीं हो पाई है अतः नीचे की पंक्तियों में उनकी शैली समीक्षा को भी अधिक स्थान नहीं मिल सका है। साथ ही इस परिच्छेद के लेखकों की कृतियों से अवतरण भी, इसीलिये, नहीं प्रस्तुत किये गए हैं। दूसरे आधुनिक लेखकों की रचना से लोग परिचित भी अधिक हैं आधुनिक लेखकों के निबंध, निबंध की उस प्रारंभिक कसौटी— आत्मीयता और व्यक्तित्व—पर, बहुत कम उत्तम कोटि आएँगे। वास्तव में अब निबंध की कल्पना में ही अन्तर हो गया है, अब तो प्रायः सभी विद्वान् आलोचनात्मक एवं साहित्य संबंधी लेख, उन्हें निबंध भी कह सकते हैं, लिखने में अपनी लेखनी की सफलता समझते हैं। अतः शेष लेखकों का वर्णन किया जाता है।

इनमें से पं० पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी हमारा ध्यान सबसे पहले आकर्षित करते हैं। आप हिन्दी के तो उत्कट विद्वान हैं ही, पाश्चात्य भाषाओं तथा उनके साहित्य के भी अच्छे पंडित हैं। इसी कारण उनके निबंधों में पश्मिचीय ढंग की समीक्षा तथा पश्चिमीय साहित्य से भारतीय वाङ्मय की तुलना प्रायः देखी जाती है। आप के इस विस्तृत दृष्टिकोण के ही कारण आपके एक लेख संग्रह का नाम ही "विश्वसा-हित्य है"। इसमें इटली फ्रांस, जर्मनी, इङ्गलैण्ड आदि के साहित्य

(नाटक, उपन्यास, काव्य आदि) के प्रमुख तत्वों पर भारतीय दृष्टिकोण से प्रकाश डाला गया है। कुल इसमें १० निबंध हैं, जिनके नाम ये हैं :—

"साहित्य का मूल" "साहित्य का विकास" "साहित्य का सम्मिलन "काव्य विज्ञान" "नाटक" "तीर्थसलिल" "कला" "विश्वभाषा" "साहित्य और 'धर्म'।

बख्शी जी ने एक पुस्तक केवल लिखने के ही विचार से प्रस्तुत की है। उसका नाम है 'प्रबंध पारिजात'। इस पुस्तक में कुछ 'नुस्खे' हैं, कुछ 'सूचनाएँ' दो चार 'कहानियाँ' भी, 'पत्र' भी'; कुछ 'कथोपकथन' कुछ 'चुटकुले'—और उसका नाम है 'प्रबंध पारिजात'।

उदाहरणार्थ 'भेद' का भेद देखिये:—

आम ने बबूल से कहा, "भाई! तुम क्यों फूलते फलते हो? तुम्हारी छाया भी व्यर्थ है। सचमुच तुम्हारा भाग्य बड़ा बुरा है।"

बबूल ने कहा—'भाई तुम जीवित रहते हो तभी फल देते हो; पर मेरी सफलता अपने को भस्म रखने में ही है।"

अतः बख्शी जी का प्रबंध पारिजात साहित्यिक निबंधों की कोटि में नहीं रखा जा सकता। हाँ कुछ लेख ऐसे अवश्य हैं जो लेखक के हृदय का प्रकाशन हैं अतः वे अच्छे भी हैं—जैसे 'जाति और साहित्य' और 'विश्व वाटिका'।

बख्शी जी की तीसरी पुस्तक है 'पंचपात्र'। इसमें पाँच विभाग हैं—पद्य, साहित्य, हिन्दी काव्य, समस्या और विनोद। इनके अंतर्गत इस प्रकार के लेख हैं।

"उपन्यास रहस्य" "हिन्दी काव्य में प्रेम" हिन्दी काव्य में सौंदर्य सृष्टि" "राष्ट्र समस्या" "छायावाद" "धर्म रहस्य"।

इसके अतिरिक्त बख्शी जी ने भिन्न भिन्न लेखकों के निबंधों को लेकर दो तीन पुस्तकों का संपादन भी किया है, जैसे साहित्य शिक्षा, नवयुग पाठमाला, हिन्दी गद्यमाला।

कुंवर राजेन्द्र सिंह भी हिन्दी के एक उदीयमान निबंध लेखक हैं। पता नहीं किस कारण से अब आपके निबंध प्रायः नहीं के बराबर देखने आते हैं। किन्तु दो ही चार वर्ष पहले तक आप सुन्दर विषयों पर 'सरस्वती' में लिखते रहे हैं। "गन्ध" "सौंदय" आदि पर आपने सुन्दर मनन योग्य निबंध लिखे हैं जिनसे आपकी बिस्तृत अध्ययन-शीलता और भावों को प्रकाशित करने की अपूर्व शक्ति का पता चलता है।

बा० ब्रजमोहन वर्मा भी एक कुशल निबंधकार हैं। उनका शब्द चयन बड़ा सुन्दर एवं विषयानुकूल रहता है। आपके निबंधों की कोई पुस्तक प्रथक् नहीं प्रकाशित हुई किन्तु 'विशाल भारत' में आपके निबंध प्रायः दिखाई दे जाते थे। 'खुदाई का मास्टर पीस' 'हमारा पेशवा' प्रभृति कतिपय उत्कृष्ट निबंध उक्त पत्रिकामें निकले थे।

सरस्वती संपादक श्री नाथ सिंह जी भी जब वैयक्तिक द्वेष से अपनी रचना की प्रेरणा न ग्रहण कर स्वतन्त्ररूप से लिखते हैं तब अच्छे निबंध-साहित्य का निर्माण कर देते हैं। रोचकता उनके लेखों का प्रधान गुण है। इनके लेख 'सरस्वती' में ही बहुधा दिखाई पड़ते हैं।

लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी अध्यापक डा० पीताम्बर दत्त जी भी एक अच्छे निबंध लेखक हैं। बड़थ्वाल जी[1] यद्यपि समालोचक पहले हैं, जिस रूप में उन्होंने तुलसीदास, कबीरदास, केशवदास और संत साहित्य पर अपनी वि त्तापूर्ण कुशल लेखनी से लिखकर हिन्दी-संसार का मस्तक ऊँचा किया है, तथापि यदा कदा निबंध भी अच्छे लिखते हैं यथा 'महाकवि केशवदास' 'हिन्दी साहित्य में उपासना का स्वरूप' 'जायसी का अध्यात्मवाद' 'गंगाबाई'।

इसी प्रकार पं० सद्गुरु शरण अवस्थी भी एक उच्चकोटि के निबन्धकार हैं। अभी तक उनके इस रूप से अधिकांश हिन्दी संसार अपरिचित ही था, परन्तु अब उनके विचारात्मक निबंधों का संग्रह

[1] शोक है कि गतवर्ष उनका देहान्त हो गया।

'विचार विमर्श' नाम से तथा साहित्यिक निबंधों का संग्रह 'हृदय ध्वनि' नाम से पुस्तकाकार हो चुके हैं। बादवाली पुस्तक में १४ श्रेष्ठ निबंध हैं। कुछ शीर्षक इस प्रकार हैं :—

'हाँ' 'इक्का' 'पल्हड़' 'बड़े बाबू' 'अंधकार' 'रामचन्द्र शुक्ल'।

इन लेखकों के उपरान्त पं० नन्ददुलारे वाजपेयी पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी उच्चकोटि के लेखक व समालोचक हैं। आपके लेख हिन्दी साहित्य की स्थायी संपत्ति हैं, परन्तु पाश्चात्य निबंध के आदर्श पर ये नहीं लिखे गए हैं। प्रथक पुस्तक के रूप में इनमें से किसी के निबंधों का महत्व नहीं प्रस्फुटित हो पाया है, 'विशाल भारत' 'माधुरी' 'सरस्वती' आदि सामयिक पत्रिकाओं में ही इन लेखकद्वय के लेख मिल जाते हैं। वाजपेयी जी ने "साहित्य सुषमा" नामक एक संग्रह ग्रंथ में १२ अच्छे साहिय विषयों पर लिखे गए लेखों का संकलन भी किया है जिनमें श्री रामकुमार वर्मा का 'रंगमञ्च' तथा बाबू मैथिलीशरण गुप्त का 'कल्पना और यथार्थ' अन्य निबंधों की अपेक्षा श्रेष्ठ हैं, किन्तु उक्त पुस्तक में वाजपेयी जी का अपना एक लेख भी नहीं है।

यत्र तत्र प्रकाशित सामग्री में से वाजपेयी जी के 'एकांकी नाटक' 'जैनेन्द्र पर विचार' ये दो निबंध पर्याप्त मात्रा में सुन्दर हैं। तदनन्तर 'काव्य और कला' तथा 'सूर संदर्भ' इन पुस्तकों की भूमिका में भी वाजपेयी जी की कुशल लेखनी का परिचय मिलता है। गतवर्ष 'जयशंकर प्रसाद' नाम से प्रसाद जी पर एक सुन्दर समालोचनापूर्ण पुस्तक भी आपने लिखी थी।

आलोचनात्मक लेख या निबंध लिखनेवालों में श्री शांतिप्रिय द्विवेदी तथा श्री रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख' के नाम भी चिरस्मरणीय रहेंगे। द्विवेदी जी की तो पाँच पुस्तकें[1] प्रकाशित हो चुकी हैं जिनके नाम हैं :—

---

[1]सुनते हैं कि युग और साहित्य नाम की एक पुस्तक द्विवेदी जी की और भी है।

'हमारे साहित्य निर्माता' 'कवि और काव्य' 'साहित्यिकी' 'संचारिणी' तथा 'जीवनयात्रा'। इन पाँचों पुस्तकों में प्रायः ८० निबंध हैं। आत्म-गत विचारों की दृष्टि से अनेक लेख अच्छे हैं जैसे 'मीरा का तन्मय संगीत' 'कवि की करुण-दृष्टि' 'कवि का मनुष्यलोक' एवं 'वेदना का गौरव'—ये चार निबंध 'कवि और काव्य' में; 'कविता और कहानी' 'औपन्यासिकता पर एक दृष्टि' 'साकेत में उर्मिला' 'गद्यकार निराला' तथा 'गोदान और प्रेमचंद'—ये 'साहित्यिकी' में; 'कला जगत् और वस्तु जगत्' 'छायावाद का उत्कर्ष' और 'हिन्दी गीतकाव्य' ये तीन निबंध 'संचारिणी' में तथा 'जीवन की ज्वाला' 'हँसता जीवन' 'प्रोत्सा-हन' 'युद्ध की विभीषिका' 'जीवन यात्रा' में। ये श्रेष्ठातिश्रेष्ठ साहि-त्यिक निबंधों के समकक्ष स्थान पाने के अधिकारी हैं।

साहित्यिक विषयों पर आलोचनात्मक लेख लिखने वालों में सबसे अधिक निबंधत्व का प्रधान गुण एवं अवयव—आत्मीयता—श्री शांति प्रिय जी में ही मिलती है। आपके लेख विस्तृत अध्ययन के परिणाम नहीं हैं, प्रत्युत किसी भी विषय को लेकर उसमें सीधे दूर तक घुसकर कौड़ी लाने के प्रयत्न प्रतीत होते हैं। निबंध का एक यही महत्वपूर्ण गुण है।

श्री शांतिप्रिय द्विवेदी के निबंधों के विषय में डाक्टर रामकुमार वर्मा की सम्मति है कि "शांति प्रिय द्विवेदी ने अपने निबंधों की पृष्ठ-भूमि न तो संस्कृत साहित्य से ली है और न अंग्रेजी साहित्य से। उन्होंने अपनी मननशीलता में ही, अपने बौद्धिक स्तर में ही, अपनी आलोचना के आदर्श स्थापित किए हैं—लेखक ने अपना हृदय पिघलाकर उन आदर्शों को प्राप्त किया है।"

द्विवेदी जी के निबंधों में मुख्यतया दो शैलियाँ उपलब्ध होती हैं, एक आलोचनात्मक शैली, जिसमें विचारों की प्रधानता रहती है, लेखक मननशील होकर अपने अनुभव को प्रकट करता चलता है,

दूसरी भावात्मक शैली, जिसमें हास्य एवं विनोद की मात्रा प्रधान रहती है। पहली में भाषा शुद्ध एवं परिमार्जित रहती है, दूसरी में विदेशी भाषाओं के अनेक शब्दों एवं मुहावरों-कहावतों के प्रयोग के कारण भाषा में व्यावहारिकता तथा सुबोधता रहती है।

कालिदास कपूर भी इस श्रेणी के एक अच्छे लेखक हैं। उपन्यासों का आपका अध्ययन गंभीर है अतः रंगभूमि, प्रेमाश्रम, सेवासदन, हिन्दी में उपन्यास साहित्य, ये निबंध प्रौढ़ हैं। पत्र-पत्रिकाओं में आपके लेख प्रायः दृष्टिपथ में आ जाते हैं। १० लेखों के एक संग्रह—साहित्य समीक्षा-को आपने मुद्रित भी करवाया है।

पं० रामकृष्ण 'शिलीमुख' भी कवियों तथा साहित्यिक विषयों पर अच्छी आलोचनाएँ लिखते हैं। वे भी प्रायः निबंध कोटि की अधिकारिणी हैं। इनकी 'सुकवि-समीक्षा' में हिन्दी साहित्य के प्राचीन कतिपय प्रमुख कवियों पर आलोचनात्मक प्रबंध लिखे गये हैं जैसे मीराबाई, सूरदास, तुलसीदास, भूषण, हरिश्चन्द्र, जयशंकर प्रसाद आदि।

पं० प्रभुनारायण के नौ लेख 'विचार वैभव' नामकी पुस्तक में निकले हैं। मौलिक चिंतन एवं मनन की दृष्टि से सभी अच्छे हैं। विषय प्रायः कविता से संबंध रखने वाले हैं यथा काव्य में कल्पना, रसोद्रेक, वादत्रयी, काव्य में अलंकार का स्थान।

इधर श्री जैनेन्द्र कुमार जी ने कहानी तथा उपन्यासों के अतिरिक्त निबंध भी लिखना प्रारंभ किये हैं। आपके निबंध भी अधिकांश में साहित्यिक विषयों पर ही होते हैं। ये लेख 'हंस' में तो प्रायः देखने को मिलते ही हैं 'जैनेन्द्र के विचार' नाम से प्रथक् पुस्तकाकार भी प्राप्य हैं। उनके लेखों में मौलिकता है, गंभीरता है, तथा भावाधिक्य के कारण वाक्य सूत्रवत् हैं। शैली एवं भाषा बड़ी ही स्वाभाविक है।

परन्तु शुद्ध निबंध रचना की दृष्टि से एक नाम बड़ा ही महत्वपूर्ण

रह जाता है, क्योंकि उस नाम से कवि के रूप में तो बहुत लोग परिचित हैं, परन्तु एक श्रेष्ठातिश्रेष्ठ निबंधकार के रूप में वह नाम कम लोगों को ही ज्ञात है। ये महानुभाव हैं सियाराम शरण गुप्त। पश्चिम के प्रारंभिक दृष्टिकोण से आजकल हिन्दी में यदि कोई लेखक निबंधकार कहा जा सकता है तो हमारे गुप्त जी ही की ओर अंगुलि-निर्देश होता है। एक सीधे तथा संक्षिप्त रूप में आत्मकथन इनके निबंधों की विशेषता है। आपकी निबंध-पुस्तक का नाम है 'झूठ सच'। इसमें २८ निबंध हैं किन्तु निम्नलिखित चार-छः तो मुझे बहुत सुन्दर प्रतीत हुए।

'वहस की बात' 'अपूर्ण' 'एक दिन' 'बाल्यस्मृति' 'निज कवित्त, इत्यादि।

उक्त पुस्तक के 'प्रारंभिक' के कुछ वाक्य जो गुप्त जी के ही हैं हमारे विषय से विशेष संबंध रखते हैं अतः लिखे जाते हैं :—

"कई बरस पहले बंधुवर बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने एक बार मेरे विषय में कुछ ऐसी बातें लिखीं थीं कि मैं कविता में अनादृत हुआ, इसलिए उधर से हट मैंने यह लिखा-वह लिखा, और और-कुछ लिखा; और अब मैं निबंध लिखने की सोच रहा हूँ।"

प्रयाग विश्व विद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डा० धीरेंद्र वर्मा भी एक अच्छे विचार प्रधान लेखक हैं। आपकी शैली बड़ी स्पष्ट, विषय प्रतिपादन बड़ा सुलझा हुआ और सामग्री प्रायः मौलिक है; जिस विषय को आप उठाते हैं, उसी पर अपनी पैनी दृष्टि से अनेकांगी प्रकाश डाल देते हैं। आपका लेख संग्रह 'विचार धारा' के नाम से साहित्य भवन, प्रयाग से प्रकाशित हो चुका है।

यह सामग्री पाँच भागों में विभक्त है—'खोज' 'हिन्दी प्रचार' 'हिन्दी साहित्य', 'समाज तथा राजनीति' और 'आलोचना,' तथा 'मिश्रित'। जैसा कहा जा चुका है, मौलिकता इनका प्रधान गुण है। इन पाँच भागों में ३४ लेख हैं। इन सभी में बहुधा रूक्षता सी मिलती

है,—उसका कारण चाहे विषय की शुष्कता हो अथवा स्वयं लेखक के व्यक्तित्व की गंभीरतापूर्ण नीरसता हो। वर्मा जी में शुद्ध निबंधकार के गुण अल्पमात्रा में ही हैं यद्यपि उनके एक सफल शिक्षक तथा विद्वान् होने में कोई भी संदेह नहीं। उनके उक्त लेखों को किसी तत्तद्विषयक पुस्तक के परिच्छेद मात्र ही कहना अधिक संगत होगा, क्योंकि उनमें विचारों को प्रकट करना मात्र एक उद्देश्य है, प्रतिपादन की रोचकता की ओर ध्यान कम है। उनमें 'क्या' का संतोषप्रद उत्तर है, किन्तु 'कैसे' का प्रश्न रह जाता है। यह दूसरी वस्तु—'क्या'—ही हमारे अधिक काम की है और यही लेख को 'निबंध' संज्ञा प्रदान करती है। उक्त पुस्तक के निबंधों के कतिपय शीर्षक ही प्रकट कर देंगे कि वे निबंध कोटि से दूर ही समझे जायंगे।

संयुक्त प्रान्त में हिन्दू पुरुषों के नाम; हिन्दी भाषा संबंधी अशुद्धियाँ; हिन्दी वर्णों का प्रयोग; अवध के जिलों के नाम; हिन्दी की भौगोलिक सीमाएँ; क्या प्रस्तावों के द्वारा हिन्दी का काया कल्प हो सकता है; क्या दो सौ बावन वार्ता गोकुलनाथ कृत है; हमारे प्रान्त की कुछ समस्याएँ; हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण।

यही नहीं 'हिन्दी साहित्य के वीर रस' 'अध्यापिका वर्ग' और 'तीन वर्ष' आदि शीर्षक निबंधों का भ्रम उत्पन्न कर सकते हैं; परन्तु ये भी दो दो तीन तीन पृष्ठ के साधारण विचार मात्र हैं—( अन्तिम तो भगवती चरण वर्मा की पुस्तक की पौने दो पृष्ठ का साधारण स्तुति मात्र है )—वास्तविक निबंध इनमें से कोई नहीं। संक्षेप में वर्मा जी के उदाहरण से हम कह सकते हैं कि एक असाधारण विद्वान् का एक उत्तम निबंधकार होना आवश्यक नहीं। लेखक और निबंधकार में तो स्पष्ट अन्तर है ही। ✓

"इन महानुभावों के सिवाय प्रो० ( अब डाक्टर) रामकुमार वर्मा भी कभी कभी उत्तम निबंध सृष्टि ( ! ) कर देते हैं। श्री संतराम बी०

ए० भी अच्छे निबंधकार हैं........प्रो० हंसराज भाटिया एम० ए० यद्यपि हिन्दी के विशेषज्ञ नहीं हैं पर कभी कभी उत्तम निबंध लिखते हैं। हाँ, उनमें अँग्रेजी की पालिश रहती है, पर मौलिकता उनकी है। बा० शीतला सहाय और राहुल सांकृत्यायन भी बड़े अध्ययन के बाद लिखते हैं।" श्री राहुल जी की पुस्तक—'क्या करें'—में नौ लेख हैं; विषय और सामग्री सामयिक है, यथा 'क्या जापान हमारा पड़ोसी बनेगा' 'रूस की पंचायती खेती' आदि।

श्रीयुत डाक्टर राम शंकर शुक्ल 'रसाल' ने भी कई प्रकार के विशेष निबंधों के लिखने का अभ्यास किया, जैसे किसी में कवर्ग का कोई अक्षर नहीं, किसी लेख में दीर्घ वर्ण ही नहीं, किसी में ओष्ठ्य वर्ण ही नहीं आदि, किन्तु ये सब मानसिक व्यायाम थे और प्रकाशित भी कभी नहीं हुए। इलाचंद जोशी ने भी कुछ साहित्यिक निबंध लिखे हैं। 'साहित्य सर्जना' इनके लेखों का अच्छा संग्रह है। श्री गंगा प्रसाद पांडे भी एक उदीयमान लेखक हैं। आपने थोड़ी सी ही अवस्था में "निबंधिनी' 'काव्य कलना' और 'नीर क्षीर' ये तीन पुस्तकें अपने आलोचनात्मक लेखों की निकलवा दी हैं।

श्री प्रभाकर माचवे एक अच्छे विचार प्रधान लेखक समझे जाते हैं। यद्यपि आपके 'साहित्य में प्रगतिवाद की इष्टानिष्टता' 'जैनेन्द्र' आदि थोड़े ही लेख हिन्दी संसार को मिले हैं, तथापि आपकी प्रसिद्धि कम नहीं है। इसी प्रकार प्रो० नगेन्द्र के भी कुछ लेख या विचारात्मक निबंध अनूठे हैं यथा 'हिन्दी कविता की नवीनतम प्रगति', 'हिन्दी में गीति-काव्य' आदि।

ठा० जगमोहनसिंह जी के ढंग पर प्राकृतिक दृश्यों को लेकर सुन्दर सुरुचि पूर्ण रीति से लिखने वालों में दो नाम अधिक प्रसिद्ध हैं। निबंध साहित्य की चर्चा में उनका नाम विस्मृत हो जाना घोर अन्याय होगा। इनमें से पहला नाम है गणपति जानकीराम दुबे

का और दूसरा है बा० कृष्ण बलदेव वर्मा का। यद्यपि इस युग्म की भी रचना कलेवर की दृष्टि से अधिक नहीं है तथापि वह अपने क्षेत्र में विशिष्ट पद प्राप्त है और इसीलिये अधिकांश निबंध रचयिताओं से मार्मिक भिन्नता रखती है। वर्मा जी का बुन्देलखंड (ओड़छा) पर विशेष अध्ययन है और 'बुन्देलखंड पर्यटन' नाम से आपने अधिक लिखा है।

श्री रामदास जी गौड़ के लेख वैज्ञानिक विषयों पर बड़े ही सुन्दर लिखे मिलते हैं; किशोर लाल मश्रुवाला का भी अपनी विशिष्ट शैली के कारण, निबंधकारों में परिगणन उचित ही होगा। काका कालेलकर के हिन्दी भाषा संबंधी लेख सुन्दर होते हैं। इनके उपरान्त रामनाथ 'सुमन' तथा गणेश शंकर विद्यार्थी भी अच्छे लेखक हैं और इनके लेखों में से कुछ 'निबंध' भी है, यह मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया जायगा, परन्तु इनकी कृतियाँ पुस्तकाकार नहीं हुई हैं। पत्र पत्रिकाओं में ही इनकी यह सामग्री प्रकाश में आई है।

पं० हरिभाऊ उपाध्याय ने भी समाज विज्ञान संबंधी कुछ बहुत सुन्दर निबंध लिखे हैं; इनकी शैली प्रभावोत्पादक है; भाषा भी बड़ी साधु-सुष्ठु है। इनके विचारों की एक पुस्तक भी प्रकाशित हुई है। उसका नाम है 'स्वतंत्रता की ओर' इसमें जीवन को उन्नत तथा सात्विक बनाने वाले श्रेष्ठ विचारों का संगुफन है। अनेक छोटे बड़े विचारात्मक निबंधों के द्वारा राजकीय स्वतंत्रता तथा वास्तविक स्वतंत्रता का भेद दिखलाया है। कतिपय निबंधों को हम उत्तमोत्तम कोटि के निबंधों में रख सकते हैं यथाः—स्वतंत्रता का पूर्ण स्वरूप, स्त्री का 'महत्व', 'सौंदर्य और सदाचार' 'धर्म और नीति' 'गृह कलह की आशंका'। इनमें कहीं कहीं सूत्र के समान विचारों से ओत प्रोत वाक्यों को देखकर शुक्ल जी का स्मरण हो आता है। उदाहरणार्थ दो चार वाक्य दिये जाते हैं :—

"नीति प्रेरक है, धर्म स्थापक" "सहयोग जीवन का तत्व है, विरोध जीवन का दोष है।" 'महज सुखोपभोग की सुविधा को स्वतंत्रता समझ लेना हमारी भूल है'।

श्री देवशर्मा 'अभय' की 'तरंगित हृदय' एक सुन्दर पुस्तक है। इसके २१ लेखों में यद्यपि शुद्ध निबंध के समकक्ष कोई स्थान नहीं पाता है फिर भी कुछ लेख रोचक अवश्य हैं यथाः—नमस्कार, तेरा कौन है, चातक का वैराग्य, तेरी धोखेबाजी, निराले आदमी, थोड़ा सा। इसी प्रकार कविवर मोहनलाल महतो की पुस्तक 'विचारधारा' में भी १३ सुन्दर लेख हैं परन्तु विषय सब के सामयिक हैं, और निबंध कोटि से अत्यंत दूर हैं यथा "गांधी जी", 'सरकार और अर्थचक्र'। एक आध साहित्यिक विषय भी है जैसे 'साहित्य और समाज'।

इस प्रसंग को यहाँ पर केवल यह कह कर ही समाप्त किया जाता है कि आज कल छोटे बड़े अनेक लेखक तथा निबंधकार हैं जिनकी नामावली चाहे कितनी ही सावधानी से क्यों न बनाई जाय, फिर भी कुछ न कुछ छूट ही जायँगे। लगभग एक दर्जन से अधिक हिन्दी की सुन्दर साहित्यिक मासिक पत्रिकाएँ निकल रही हैं, कुछ साप्ताहिक और पाक्षिक भी हैं इन सभी में नए पुराने अनेक लेखक लेख-कहानी-निबंध भेजा करते हैं अतः इन सब का नामोल्लेख असंभव ही नहीं निरर्थक भी है क्योंकि उन लोगों की निबंध संबंधिनी न तो कोई विशेषताएँ ही प्रकाश में आई हैं और न उनकी प्रसिद्धि ही इतनी हो सकी है अतः ऐसे सब लेखकों से उनके नाम न दे सकने की क्षमा याचना का प्रार्थी हूँ।

———

# लेखिकाएँ

इस समय तक हमने निबंध साहित्य का जितना विवेचन या दिग्दर्शन किया उससे एक बात की ओर हमारा ध्यान स्वभावतः आकर्षित हो जाता है। वह यह कि इस निबंध-साहित्य के उन्नायकों में हमें स्त्रियों का हाथ नहीं दिखाई पड़ा। एक तो वैसेही स्त्रियाँ साहित्य के क्षेत्र में कम आती हैं, जो आती भी हैं वे निसर्गतः भावुक और कोमल हृदय की होने के कारण कविता की ओर झुक जाती हैं; सुभद्रा कुमारी चौहान, तोरन देवी शुक्ल 'लली' तारा पांडे आदि कवयित्रियाँ तो हमें देखने को मिल भी जाती हैं किन्तु निबंध लेखिकाओं का प्रायः अभाव ही है। मासिक पत्रिकाओं में कभी किसी महिला का लेख देखने को भी यदि मिल जाय, तो भी हमारे ऊपर के कथन की सत्यता कम नहीं होती। यहाँ दो एक नामों का संकेत किया जा सकता है जैसे चंदाबाई, कमलाबाई कीवे, कुमारी गोदावरी केतकर, चंद्रावती त्रिपाठी, रामेश्वरी नेहरू, उमा नेहरू, महादेवी वर्मा आदि। चंदाबाई जी की तो एक साधारण सी पुस्तक भी उपलब्ध होती है जिसका नाम है "निबंध रत्न माला" श्रीमती रामेश्वरी नेहरू जी के लेख "स्त्री दर्पण पत्रिका" में निकला करते थे जिसकी ये स्वयं संपादिका भी थीं। इसी प्रकार उमा जी भी स्वसंपादित 'सहेली' पत्रिका में लिखा करती थीं। श्रीमती वर्मा के विचारों का एक संग्रह "शृंखला की कड़ियाँ" नाम से अभी साधना सदन प्रयाग से निकला है।

उक्त पुस्तक में भारतीय नारी की समस्याओं का सुन्दर विवेचन अट्ठारह निबंधों में हुआ है। सभी निबंध मनन एवं चिंतन सापेक्ष हैं और अपनी विदुषी लेखिका के विस्तृत अध्ययन तथा विशाल अनुभव के परिचायक हैं।

शैली प्रौढ़ है और भाषा विषयानुकूल होने के कारण गंभीरता सब निबंधों का प्राण है। महादेवीजी के ये निबंध विचारात्मक कोटि में आयेंगे। व्यवसाय, जाति, अवस्था आदि सभी दृष्टियों से नारी का चित्रण हुआ है अतः भारतीय स्त्री के प्रश्न का कोई कोना अछूता नहीं रहा जहाँ पर लेखिका की पैनी दृष्टि का प्रकाश पड़ा न हो। नारी की लेखनी से नारी संबंधी वस्तु का अनुभूतिपूर्ण होना स्वभाविक ही है। सब निबंधों में महादेवी जी के गंभीर व्यक्तित्व की छाप है। यदि यह भी कहा जाय कि भारतीय नारी के संबंध में अब तक की परिस्थिति को देखते हुए किसी दृष्टि से अंतिम शब्द कह दिया गया है, तो भी कोई अत्युक्ति न होगी। इनके विषय में स्वयं महादेवी जी का कथन है "प्रस्तुत संग्रह में कुछ ऐसे निबन्ध जा रहे हैं जिनमें मैंने भारतीय नारी को अनेक दृष्टि विंदु से देखने का प्रयास किया है। अन्याय के प्रति मैं स्वभाव से असहिष्णु हूँ अतः इस निबंधों में उग्रता की गन्ध स्वभाविक है... ...।" पुस्तक के 'युद्ध और नारी' 'घर और बाहर', 'नारीत्व का अभिशाप आदि कुछ लेखों ने मुझे प्रभूत मात्रा में प्रभावित किया है। यह समस्त सामग्री पाठक के विचारों को उत्तेजना प्रदान करनेवाली है और यह पुस्तक न केवल महिलाओं के निबन्ध साहित्य में योगदान के अभाव की पर्याप्त पूरिका है, प्रत्युत हमें आशावादी बनाती है कि भविष्य में इससे भी उत्कृष्ट वस्तु महादेवी जी की लेखनी से निःस्यूत होगी।

कुमारी दिनेश नन्दिनी चोरड्या भी एक भावुक हृदय गद्यलेखिका हैं। किन्तु उनका निबंध क्षेत्र में कुछ भी महत्व नहीं है। उनकी 'मौक्तिकमाल' वियोगी हरि के 'अन्तर्नाद' या रायकृष्णदास की 'साधना' के समान काव्यमय गद्य में है। इसी प्रकार के भावात्मक गद्य लिखने वालियों में रामेश्वरी देवी गोयल का नाम भी महत्वपूर्ण है।

---

# अनुवादित निबंध साहित्य

हमारे निबंधों का एक पक्ष और भी अछूता पड़ा है और वह है अन्य भाषाओं के अच्छे अच्छे निबन्धों के अनुवाद का। कुछ निबंधों के साधारण से अनुवाद के अतिरिक्त जिन लेखों का अच्छा अनुवाद भी हुआ है, वे लेख ही निबंध कोटि में नहीं आते। जैसा कि अभी प्रतीत होगा, इस प्रकार की सामग्री उँगलियों पर गिनी जा सकती है। स्व० रवीन्द्रनाथ ठाकुर की निम्नलिखित आठ पुस्तकों का अच्छा अनुवाद हुआ है ।

"साहित्य" "प्राचीन साहित्य" "राजा और प्रजा" "स्वदेश" "समाज" "शिक्षा" "शिक्षा कैसी हो" तथा "विचित्र प्रबंध" ।

इन सब में मिलाकर लगभग ६० निबंध हैं। किन्तु वास्तविक निबंध कोटि तक थोड़े ही पहुँचते हैं जैसे 'सौंदर्य-बोध', 'सौंदर्य और साहित्य,' "साहित्य सृष्टि" 'पूर्व और पश्चिम,' 'समाजभेद', 'आवरण,' 'राजभक्ति,' 'काव्य की उपेक्षिता' आदि। इनमें भी दो लेख तो बहुत ही उच्च कोटि के हैं 'सौंदर्य बोध' तथा 'राजभक्ति'।

दूसरा उल्लेख्य अनुवाद है बंकिम बाबू के निबंधों का। ये निबंध 'बंकिम निबंधावली' के नाम से मिलते हैं। इसमें उक्त बाबू साहब के २५ चुने हुए निबंध दिए गये हैं, अतः सभी निबंध कोटि में रखे जा सकते हैं। बंकिम बाबू के निबंध क्षेत्र से परिचय प्राप्त करने के लिए उदाहरणवत् उनके निबंधों के दो चार नाम ये हैं:—

"धर्म और साहित्य", "गीति काव्य", "बाहुबल और वाक्य बल" "मेघ" ।

पं० गंगा प्रसाद अग्निहोत्री कृत मराठी विद्वान् चिपलूणकर के

पाँच लेखों—विद्वत्व और काव्यत्व, समालोचना, अभिमान, संपत्ति का उपभोग, वक्तृता,—के अनुवाद का संकेत अन्यत्र भी हो चुका है। यह अनुवाद 'निबंधमालादर्श' के नाम से किया गया है। इसी प्रकार पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी कृत वेकनके निबंधों के अनुवाद का नाम 'वेकन विचार-रत्नावली 'भी पहले ही लिया जा चुका है।

परन्तु जैसा कि कहा जा चुका है इस क्षेत्र में बड़ी न्यूनता है। अँग्रेजी, फ्राँसीसी, जर्मन आदि अनेक पाश्चात्य भाषाओं, तथा मराठी, गुजराती, बंगाली आदि अपने देश की ही भाषाओं में अनेक अच्छे अच्छे निबंधरत्न पड़े होंगे जिनके अनुवाद द्वारा अपने साहित्य कोष को प्रभूत देखकर किसी भी भाषा को गर्व हो सकता है, किन्तु न जाने क्यों हिन्दी भाषियों और मातृभाषा प्रेमियों की इस ओर उपेक्षा-दृष्टि चल रही है। जिस तीव्र गति से उपन्यास तथा नाटकों का अनुवाद हिन्दी में आ रहा है, यदि उसकी आधी चाल से भी निबंध आएँ, तो हिन्दी निबंध साहित्य की इतनी शोचनीय दशा न रहे, यह निश्चित है।

# पाठ्य-पुस्तकें : "बातों के संग्रह"
# 'संपादित-सामग्री'

अंत में जैसा कि अन्यत्र कहा जा चुका है, उन पुस्तकों की चर्चा करना अभीष्ट है जो पाठ्य पुस्तकों के रूप में या साधारण विद्यार्थी को निबंध नाम की विलायती चिड़िया से परिचित बनाने के लिये लिखी गई हैं। विवेचन के सुविधार्थ इनको दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, एक तो वे पुस्तकें जो दशम श्रेणी से नीचे के विद्यार्थियों के लिए हैं और दूसरी वे जो उससे उच्च श्रेणी के लिए हैं। ये दूसरे प्रकार की रचनाएँ तो दाल में नमक के बराबर ही ठहरती हैं।

प्रथम वर्ग में पं० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी का नाम मुख्य है। चतुर्वेदी जी ने 'हिन्दी-निबंध-शिक्षा' 'प्रबंध रचना शैली' प्रभृत कई पुस्तकें लिखी हैं, जो कुछ काल पूर्व तक बहुत दिनों से छोटे छोटे निबंध लेखकों का पथ प्रदर्शन करती आ रहीं थीं। दूसरा नाम है पं० गोकुल चंद शर्मा का। आपकी 'निबंधादर्श' पुस्तक इस प्रकार की अन्य रचनाओं से कुछ अधिक श्रेष्ठ है क्योंकि यह कुछ कुछ पाश्चात्य शैली पर लिखी गई हैं।

तीसरी पुस्तक प्रो० राम रतन भट नागर कृत 'निबंध प्रबोध' उपर्युक्त दोनों पुस्तकों से श्रेष्ठ ही नहीं है, प्रत्युत कतिपय निबंधों के आधार पर यह दूसरे वर्ग में भी स्थान पा सकती है। निबंध बड़े परिश्रम-सापेक्ष एवं मौलिक हैं। छात्रों की सुविधा की दृष्टि से सारी सामग्री चार भागों में विभक्त है। विवरणात्मक, वर्णनात्मक, विवेचनात्मक तथा व्याख्यात्मक निबंध अंतिम दो शीर्षकों के अंतर्गत प्राप्त वस्तु ही इस पुस्तक को द्वितीय वर्ग की अधिकारिणी बनाती है। इसके

विषय में डा० धीरेन्द्र वर्मा की सम्मति है-"इस विषय पर अब तक जितनी भी पुस्तकें मेरे देखने में आईं उन सब की अपेक्षा मुझे यह पुस्तक उत्तम जँची। विशेषतया ऊँची कक्षा के विद्यार्थी इसे अधिक उपयोगी पावेंगे।"

इनके अतिरिक्त राम-दहिन मिश्र का हिन्दी रचना बोध, गंगा सहाय शर्मा का प्रबंध-पथ-प्रदर्शक, रामलोचन शरण का 'रचना नवनीत' चंद्रमौलि शुक्ल की 'रचना पीयूष' रामरतन अध्यापक का 'रचना प्रबोध' जगदीश झा 'विमल' की 'हिन्दी-रचना-कौमुदी,' पं० पारसनाथ त्रिपाठी का 'प्रबंध पारिजात,' पं० अंगनलाल शर्मा का 'निबंध-सोपान' (जो कि मअराजुलइंशा का नागरी अनुवाद है, 'हाई स्कूल क्लासों के निमित्त) पं० बुद्धिनाथ शर्मा शास्त्री का' 'निबंध नियम' पं० मंगलानंद गौतम का 'निबंध रचना सुरसरी' 'पं० वासुदेव शर्मा कृत 'आदर्श निबंध और (पत्रलेखन)' तथा पं० रामनरायण चतुर्वेदी की 'निबंध चंद्रिका' भी इसी नामावली कों बढ़ाते हैं, और सभी इसी वर्ग की रचनाएँ हैं। अंतिम दो पुस्तकें अन्य पुस्तकों से श्रेष्ठ भी हैं किन्तु इस लम्बी सी सूची से यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि ये कितने उत्कृष्ट निबंधों के संग्रह हैं। वास्तविक परिस्थिति यह है कि इन पुस्तकों में प्रारंभिक शिक्षावाले विद्यार्थी के ज्ञान तथा परिचय के लिये मोटी मोटी बातों को ही निबंध संज्ञा दी गई है।

इसी स्थल के अंतर्गत कुछ ऐसी रचनाएँ भी ले लेना अनुचित न होगा जिनमें निबंध तो नहीं हैं किन्तु निबंध कला पर पूरी पुस्तक है जैसे डा० रामशंकर शुक्ल 'रसाल' का 'रचना विकाश' तथा स्वा० सत्यदेव जी की 'लेखन कला'। यों तो प्रायः सभी पुस्तकों में लेखनकला पर पुस्तक के प्रारंभिक पृष्ठों में कुछ न कुछ प्रकाश डाला जाता है, किन्तु कुछ पुस्तकों में पुस्तक का अधिकांश इसी हेतु लिखा जाता है यथा उपरिनिर्दिष्ट पुस्तकों में पं० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी की पुस्तकें।

दूसरे वर्ग की रचनाएँ तो नाम मात्र की हैं। कारण स्पष्ट ही है कि प्रथम तो प्रौढ़ लेख लिखना ही कठिन, दूसरे जब विद्यार्थी कुछ ऊपर की श्रेणियों में पहुँच गया तब उसे मोटी मोटी 'बातों' से परिचित कराने की आवश्यकता ही क्या। निबंध-रचना के लिए काव्य के समान कोई नियम तो निर्धारित ही नहीं किए जा सकते, क्योंकि बुद्धि विकसित हो जाने के कारण तथा ज्ञानानुभव की वृद्धि हो जाने के कारण चाहे जिस विषय पर लिखा जा सकता है अन्यथा केवल निबंध के नियमों तथा सिद्धांतों को घोटकर, उनका पूर्णतया निर्वाह करते हुए, प्रौढ़ निबंध नहीं लिखे जा सकते। एक कारण और भी है कि उस बुद्धि विकाश के अंतर 'रेल' 'मोटर' 'कुत्ता' 'स्कूल' पर निबंध न पढ़कर गंभीर विषयों पर निबंध पढ़ना और लिखना पड़ते हैं।—और ऐसे लेखक मिल ही जाते हैं जिनके भिन्न-भिन्न प्रकार के विशेष प्रबंध पढ़े जा सकें। अतः साधारण निबंधों की आवश्यकता ही समाप्त हो जाती है। नामग्रहणार्थ 'रचना चंद्रोदय' 'प्रबंध-प्रभाकर' के सदृश कतिपय रचनाएँ ही उत्तम हैं।

अभी 'साधनासदन' प्रयाग से श्री राजेन्द्रसिंह गौड़ की एक पुस्तक 'निबंधकला' प्रकाशित हुई है। निबंध क्या 'रचनाकला' नाम अधिक सार्थक होता, क्योंकि लिखने से संबद्ध सब आवश्यक सामग्री पर लेखक ने प्रयास किया है। पुस्तक हिन्दी साहित्य का इतिहास (गद्य के विकास की दृष्टि से) भी है, भाषा विज्ञान (संसार की भाषाओं का विभाजन, भाषा की उत्पत्ति, परिवर्तन) भी और व्याकरण का तो एक अच्छा सा अंश है क्योंकि तत्संबंधी सब ज्ञातव्य बातें (शब्दभेद, समास, संधि, तद्धित, कृदन्त आदि) उल्लिखित हैं। पुस्तक की उपादेयता में कोई संदेह नहीं कर सकता और वास्तव में उक्त पुस्तक के द्वारा हिन्दी में एक बड़े अभाव की पूर्ति हुई है। आरंभिक लेखकों का सुन्दर पथ दर्शन हो सकता है। यह पुस्तक 'रसाल' जी की तथा स्वा० सत्यदेव

जी की पुस्तकों से उत्कृष्ट है ।

यहाँ पर यह कहना अनावश्यक न होगा कि ऐसे लेखों या निबंधों में साहित्यिकता, प्रौढ़ता, आत्मीयता या 'निबंधत्व' बहुत ही न्यून मात्रा में होते हैं लेखक को तो उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए कुत्ता विल्ली से लगाकर गंभीर विषयों तक सभी पर लिखना पड़ेगा; परन्तु जब लेखक लिखने बैठता है तो यह संभव नहीं कि उसका सभी विषयों पर समान अधिकार हो, सभी में उसको प्रतिभा का पुट लग सके, या सभी में उसकी चित्त वृत्ति समान रूप से रमण कर सके। सब प्रकार के निबंधों में उसके हृदय तथा उसकी आत्मा का सामंजस्य स्थापित नहीं हो सकता। किन्तु पुस्तक संपूर्ण करने के लिए उसे तो लिखना ही है, अन्यथा पुस्तक ही अपूर्ण रही जाती है, अतः वह उन विषयों को, जो उसकी रुचि के अनुकूल नहीं हैं, किसी प्रकार चलता कर देता है।

नितांत प्रारंभिक ज्ञान वाले छात्रों के निमित्त निर्मित निबंध-साहित्य में, जैसी पं० द्वारका प्रसाद चतुर्वेदी की पुस्तकें हैं, लेखक का लक्ष्य अनेक प्रकार के ज्ञान भांडार से बच्चे की बुद्धि को भरने का भी रहता है—इसीलिए 'प्रबंध-रचना-शैली' में लेख इस ढंग के भी हैं, 'रेल', 'कसरत' 'पुस्तकालय', 'यात्रा', 'दहेज' 'डायरी' 'सदाचार', 'मित्र', 'परिश्रम' इत्यादि। इन्हें दो दो तीन तीन पृष्ठों में 'बातों के संग्रह' ही कहना अधिक उपयुक्त होगा, निबंध नहीं।

निबंध के नाम पर इस प्रकार की सामग्री हिन्दी में बड़ी प्रचुर मात्रा में है। कुछ का दिग्दर्शन प्रसंगापेक्षित है। पहली पुस्तक है स्वा० सत्यदेव द्वारा लिखित 'सत्य निबंधावली'। किसी पुस्तकालय की पुस्तक सूची में उक्त नाम देखकर यही अनुमान होगा कि इसमें उत्कृष्ट निबंध मिलेंगे, परन्तु उसके कुछ लेखों के नाम जो अधोलिखित हैं, उनसे स्पष्ट पता चलता है कि पुस्तक का नाम बड़ा भ्रामक सा है।

'बोस्टन से मानचेस्टर', 'सिकन क्लास का साहब', 'गोमाता' आदि।

दूसरी पुस्तक है श्री रामलोचनशरण कृत 'नीतिनिबंध'। इसके शीर्षक में भी निबंध शब्द गड़ा भ्रामक है, यही नहीं, पुस्तक के अन्दर लिखा है 'चुने हुए ४३ हिन्दी निबंधों का संग्रह' परन्तु लेख हैं 'मद्य-पान' पर 'बाल विवाह' पर 'आशा' पर 'सत्यवादिता' पर।

तीसरी पुस्तक है पंडिता श्री चंदाबाई कृत 'निबंधरत्नमाला'। इसमें भी निबंध शब्द अपने दुर्भाग्य को रो रहा है। पुस्तक में २० लेख हैं; कुछ उदाहरण हैं 'स्त्रियों में उच्च-विद्या' 'समय की उपयोगिता', 'कन्या महाविद्यालय', 'अशिक्षा की फलस्वरूपिणी झगड़ालू सास'।

चौथी पुस्तक है 'प्रबंधरत्नाकर'। इसके लेखक हैं पं० सकलनारायण शर्मा। पुस्तक में 'सूर्य' 'दिवाली' 'मेला' 'गुरुपूजा', 'साइबेरिया' 'कपड़ा पहिनना', 'दूरवीक्षण यंत्र' के सदृश ५२ लेख हैं।

पाँचवीं पोथी है पं० पारसनाथ त्रिपाठी कृत 'प्रबंध पारिजात'। इसमें २७ लेख हैं यथा 'ज्ञान और परीक्षा', 'वाणिज्य व्यापार' आदि।

उपर्युक्त पुस्तकों में से लेख नाम ऐसे ही चयन किए गए हैं, जिनके नामों को ही देखकर अनुमान किया जा सकता है कि कैसी कैसी बातों पर—जो भिन्नातिभिन्न रुचि तथा अनेक प्रकार की हैं—निबंध लिखे जाते हैं। इनमें दो तीन पृष्ठों में लेखक का एक मात्र उद्देश्य यह होता है कि वह अपने प्रस्तुत विषय का कुछ परिचय कर दे या सूचना के रूप में आभास मात्र दे दे। इसके लिये लेखक को अपने ज्ञान, अपने अनुभव और अपनी विद्या की बड़ी आवश्यकता रहती है, क्योंकि परिचय जो कराया जाता है, वह इन्हीं 'बातों' का अथवा इन्हीं के आधार पर होता है।

ऐसे निबंधों में न तो लेख के साथ पाठक की तन्मयता स्थापित होकर कुछ मनोरंजन ही होता है, न उनमें आत्मीयता वा लेखक का व्यक्तित्व ही होता है, (जैसा कि पं० प्रतापनारायण मिश्र आदि आरंभ

कालीन लेखकों में हमें उपलब्ध होता है ) और न आधुनिक निबंध-कारों के समान उनमें साहित्यिक एवं समालोचनात्मक तत्व ही रहते हैं। इसीलिए ऐसी रचनाओं को आचार्य पं० रामचंद्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में 'बातों के संग्रह' नाम से अभिहित किया है।

कलेवर वृद्धि के भय से अधिक उदाहरण तो नहीं दिए जा सकते तथापि वस्तु स्थिति से सम्यक् परिचय प्राप्त करने के लिए कुछ अंश देखना अनिवार्य भी है।

'वाणिज्य व्यापार' का प्रथम पैराग्राफ है।

"लड़कपन में विद्यार्जनकर युवावस्था में धनार्जन करने का समय है। धनार्जन के अनेक मार्ग हैं। वाणिज्य का मार्ग भी बड़ा प्रशस्त है। वाणिज्य से अपनी और देश की भी बृद्धि होती है।"

'कपड़ा पहिनना' का प्रारंभ ऐसे होता है।

'जब कोई मनुष्य किसी के पास जाता है तब दोनों की दृष्टि परस्पर पहले कपड़े पर जाती है। अतएव कोई किसी के विषय में पहले कुछ अनुमान करता है तो उसका सहायक कपड़ा ही होता है। यही कारण है कि सभ्य समाज में कपड़ों की काटछाँट और पहनने की शैली पर विशेष ध्यान दिया जाता है।'

'कन्या महा विद्यालय' से—

'प्रिय बहनो! आज बड़े हर्ष के साथ स्वगत आशा कुसुमों का एक सामान्य उपहार आपकी सेवा में उपस्थित किया जाता है। आशा है कि आप लोग इन कुसुमों के सहारे फल प्राप्ति का प्रयत्न भले प्रकार सोंच सकेंगी।

'आशा' नामधेय निबंध का अन्तिम भाग है।

'आशा सर्वदा बनी रहने के लिए हम लोगों को ईश्वर पर विश्वास रखना चाहिए। जो ईश्वर पर विश्वास रखता है वह समझता है कि

मेरी सहायता के लिए एक बड़ी शक्ति उपस्थित है और इस प्रकार उसकी आशा कभी भंग होने ही नहीं पाती। दुनिया ब-उम्मेद कायम।'

"घड़ी में चार बजने लगे थे, पंजाब मेल की इंतजारी में मैं मुगलसराय स्टेशन के प्लेट फार्म पर टहल रहा था। आज गोरे मुसाफिरों की भीड़ अधिक थी। ये लोग मेरी ओर देख घूर रहे थे। कोई कोई भला मानुस मुसकुरा भी देता था।"

"सिकन क्लास का साहब"—से

अब केवल उन पुस्तकों की चर्चा करना शेष है जो कुछ विद्वानों ने अच्छे अच्छे लेखों या निबंधों के संग्रह अथवा संपादन द्वारा प्रस्तुत की हैं। इनमें कुछ पाश्चात्य प्रणाली की शिक्षा की भिन्न भिन्न कक्षाओं के कोर्स के रूप में हैं, और कुछ यों ही ज्ञान वृद्धि के निमित्त। उदाहरणार्थ उपेन्द्र शंकर द्विवेदी के 'आदर्श निबंध' का निर्देश भी हो चुका है। नंद दुलारे वाजपेयी की 'साहित्य सुषमा' पं० पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की साहित्य शिक्षा, बा० श्याम सुन्दरदास की हिन्दी निबंधमाला ( दो भाग ), डा० धीरेन्द्र वर्मा की 'परिषद् निबंधावली' ( दो भाग ), रामचंद्र वर्मा द्वारा संपादित 'निबंध रत्नावली' श्री गोपाल चंद्रदेव की 'निबंध कुसुमावली' आदि इसी समुदाय की कुछ सुन्दर पुस्तकें हैं। यह सभी बड़ी पठनीय सामग्री है। अच्छे से अच्छे लेखकों के सुन्दरतम निबंध इनमें संग्रहीत हैं। यथा साहित्य शिक्षा में पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी का 'वर्तमान हिन्दी कविता' श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर का 'हिन्दी के मर्मी कवि', 'कहानी' और 'उपन्यास का विषय' मुं० प्रेमचंद जी के, श्री द्विजेन्द्रलाल राय का 'नाटक' तथा श्री जैनेन्द्र कुमार का 'प्रेमचंद जी की कला' आदि १८ उत्कृष्ट निबंध हैं। इसी प्रकार अन्य पुस्तकों में भी प्रायः अच्छे साहित्यिक निबंध हैं। अंतिम पुस्तक में अधिकांश लेख संपादक के ही हैं और कुछ पर्याप्त मात्रा में सुन्दर हैं यथा कला,

रस, नम्रता इत्यादि।

श्री अम्बिका प्रसाद गुप्त की एक पुस्तक 'प्रबंध पूर्णिमा' बनारस से निकली है। इसमें भी भिन्न लेखकों के १५ निबंध हैं। पुस्तक बड़ी साधारण सी है। उसके कतिपय लेखों के नाम हैं 'अंत्यज' 'हिम्मत करो' 'बच्चों की अकाल मृत्यु', 'जान केसिल का छापा खाना'।

कोर्स की पुस्तकें जो एंट्रेंस, एफ० ए०, या बी० ए० आदि परीक्षाओं के लिए लिखी एवं सम्पादित की जाती है, वे भी प्रायः इसी वर्ग में स्थान पाती हैं। इनमें से कुछ का नामोल्लेख प्रसंगानुसार पिछले पृष्ठों में भी हो चुका है यथा श्यामसुन्दर दास की 'गद्यरत्नावली'। कुछ और हैं यथा 'हिन्दी गद्यसंग्रह', हरिशंकर शर्मा 'कविरत्न' का 'हिन्दी गद्यविहार', वियोगी हरिकृत 'हिन्दी गद्यरत्नावली', श्री सद्‌गुरुशरण अवस्थी कृत 'गद्यप्रकाश' तथा पं० कृष्णानंद पंत कृत 'गद्यसंग्रह' (जिसके मुख पृष्ठ पर लिखा है 'उच्च कोटि के निबंधों का संग्रह आगर यूनिवर्सिटी द्वारा स्वीकृत') इत्यादि।

# उपसंहार

## निबंध साहित्य पर कार्य तथा अपरीक्षित सामग्री

इन पृष्ठों के साथ निबंध-साहित्य की चर्चा तो समाप्त होती है। अब उपसंहार रूप में प्रथम तो निबंध साहित्य पर तथा निबंध लेखकों पर जो कार्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रस्तुत हुआ है उसकी विवेचना आवश्यक है। दूसरे कुछ ऐसी भी सामग्री है जो भली भाँति मेरी परीक्षा के अंतर्गत नहीं आ सकी है उसका भी कथन अप्रासंगिक न होगा।

पहले क्षेत्र की सामग्री बहुत सीमित है। क्योंकि सीधे निबंध साहित्य पर दृष्टि बहुत कम लोगों की पड़ी है। एतत्संबंधी कार्य केवल गद्य लेखकों के विवेचना के अंतर्गत ही हमें प्राप्त होता है। पहली पुस्तक इस विषय की 'हिन्दी-गद्य-मीमांसा' निकली थी। परन्तु उसका महत्व केवल पहली पुस्तक होने के कारण ही था। पुस्तक का अधिकांश हिन्दी के प्रमुख गद्य लेखकों की रचनाओं के बड़े बड़े उदाहरणों से ही भरा था।

दूसरी पुस्तक निकली थी पं० जगन्नाथप्रसाद शर्मा की 'हिन्दी की गद्य शैली का विकास'। यह पुस्तक पहली से कुछ अधिक सफल भी हुई और इसीलिए विख्यात भी बहुत हुई। इसी के आस पास एक तीसरी पुस्तक पं० गणेशप्रसाद जी ने 'हिन्दी साहित्य का गद्यकाल' नाम से लिखी थी। इन दोनों में ही हिन्दी-गद्य पर सामूहिक दृष्टि से विचार किया गया है। यत्र तत्र हिन्दी निबंध अथवा निबंधकारों पर संकेत से अधिक, किसी की भी विशेषताओं का सूक्ष्म विश्लेषण और अध्ययन करते हुए कुछ भी नहीं लिखा गया था।

इसी प्रकार की एक चौथी पुस्तक है पं० सद्‌गुरुशरण अवस्थी की 'हिन्दी-गद्यगाथा'। इस पुस्तक के संबंध में निवेदन तो है कि 'हिन्दी गद्यसाहित्य का आलोचनात्मक इतिहास और शैलीकारों की समीक्षा' परन्तु इसमें भी उपर्युक्त दोनों पुस्तकों से अधिक कोई विशेषता नहीं है। इसीलिए हिन्दी संसार ने इसका कोई विशेष सम्मान भी न किया।

पाँचवीं पुस्तक अभी एक मास पूर्व प्रकाशित हुई है। और यह है छतरपूर कालेज के हिन्दी अध्यापक पं० ब्रह्मदत्त शर्मा की 'हिन्दी साहित्य में निबंध'। अपने विषय पर यह पहली ही पुस्तक है और उस क्षेत्र के अभाव की इसने बहुत कुछ पूर्ति भी की, परन्तु पुस्तक जितनी विस्तृत तथा व्यापक है, उतनी गंभीर और विश्लेषणात्मक नहीं। कहीं कहीं पर किसी लेखक के उर्दू फारसी या संस्कृत तत्सम शब्दों की अथवा उसके द्वारा प्रयुक्त मुहावरों की इतनी लम्बी लम्बी सूचियाँ बनाई गई हैं कि शुष्कता एवं नीरसता आ जाती है—उदाहरण के लिए दो चार दस-पाँच, शब्द या मुहावरे पर्याप्त होते।

अब उस अपरीक्षित सामग्री का दिग्दर्शन कराकर परिच्छेद की समाप्ति की जाती है। पहली पुस्तक है गंगाप्रसाद अग्रवालकृत 'मनुष्य विचार'। दूसरी है, बदरी प्रसाद जोशीकृत 'विचार कुसुमांजलि'। यह काशीपुर से प्रकाशित हुई है। तीसरी पुस्तक है प्रतापमल नाहटा की 'मित्रता' और चौथी है महावीरप्रसाद द्विवेदी कृत 'संकलन'। इनके अतिरिक्त एक और पुस्तक है 'प्रबंधार्कोदय'। इसके लेखक हैं कोई पं० तुलसीराम। यह अतरौली (जि० अलीगढ़) से प्रकाशित हुई है।

इनके अतिरिक्त प्रस्तुत प्रयास के पिछले पृष्ठों में यदा कदा किसी किसी अपरीक्षित पुस्तक का नाम दिया गया है यथा शांतिप्रिय द्विवेदी की 'युग और साहित्य', बियोगीहरि जी की तरंगिणी आदि।

कुछ पुस्तकों का निर्देश और भी मिलता है परन्तु उनके लेखक का भी पता नहीं है यथा 'उच्छृङ्खल' 'फल संचय' आदि

# परिशिष्ट

## निबंध में प्रस्फुटित विशेष शैलियाँ

अब तक हिन्दी निबन्ध बहुत कुछ परिष्कृत, उन्नत एवं परिवृद्ध हो गया है । उसकी अपनी विशेषताएँ हैं; उसमें विषयभेद तथा लेख-भेद से अनेक शैलियाँ भी प्रस्फुटित हो चुकी हैं अतः उनके वर्णन के विना इस विषय की पुस्तक नितांत अपूर्ण समझी जायगी। परन्तु उक्त कार्य के लिये बड़ा गम्भीर तथा सूक्ष्म अध्ययन ही अपेक्षित नहीं है, प्रत्युत, इस विषय के साथ यदि पूर्ण न्याय किया जाय तो अपूर्व क्षमता और लेखन पटुता भी होना अनिवार्य है। वह कार्य अपरिपक्व लेखनी से प्रसूत नहीं हो सकता। अपने को मैं अभी इतना कुशल नहीं बना सका हूँ कि उक्तकार्य के भार के उत्तरदायित्व का पूर्ण निर्वाह कर सकूँ अतः नीचे की पंक्तियों में यत्किंचित अंकित कर पुस्तक समाप्त की जाती है, उसी से पाठक संतोष करें ।

वास्तव में तो शैलियों की कोई निश्चित संख्या नहीं है क्योंकि छोटे छोटे लेखकों की भी कभी कभी कुछ विशेषताएँ दृष्टिगोचर हुआ करती हैं, फिर भला अप्रतिभ एवं विद्वान् लेखकों का तो कहना ही क्या। अतः आदर्शरूप में तो जितने लेखक उतनीही शैलियाँ; इसी-लिये कोई कोई समालोचक विद्वान् भावात्मक, उपदेशात्मक, विव-रणात्मक, व्यंग्यात्मक, आख्यात्मक, व्याख्यात्मक, विवेचनात्मक, आलोचनात्मक, अनालोचनात्मक, गवेषणात्मक, तार्किक, ललित कथात्मक तथा न जाने कितने और-आत्मक जोड़ कर भेदोपभेद बताते ही चले जाते हैं, तथा कोई पाँच भेद करते हैं तो कोई सात, परन्तु मुख्यतया—विचारात्मक, भावनात्मक और वर्णनात्मक—यही

तीन शैलियाँ हैं। अधिक से अधिक एक आलोचनात्मक और मानी जा सकती है।

जगत् के बाह्य सौंदर्य एवं प्रकृति के मनोरम दृश्यों तथा व्यापारों का वर्णन करना वर्णनात्मक निबन्धों का प्रधान लक्ष्य है। भावात्मक निबन्धों में बुद्धि की अपेक्षा हृदय से अधिक सम्बन्ध होता है। इस प्रकार के निबन्ध कविता के समान भावोद्रेक कराके हृदय को प्रभावित करते हैं। इन्हीं भावात्मक निबन्धों से मिलते जुलते गद्यगीत भी हिन्दी साहित्य में आज कल खूब प्रचलित हो रहे हैं। भेद केवल इतना है कि गद्यगीत में केवल एकही भावना प्रधान रहती है, और निबन्धों में यह अनिवार्य नहीं।

इसके विपरीत विचारात्मक निबन्धों में बुद्धि से काम लिया जाता है। एक विचार से दूसरा विचार निःस्यूत होकर विचारों की शृंखला सी बनाता चलता है। इनमें कभी कभी लेखक के भावों की भी व्यंजना हो जाती है तथा इनकी भाषा अधिक शुद्ध और निखरी हुई सामने आती है।

आलोचनात्मक निबंधों की अधिकांश विशेषताएँ इसी पुस्तक के विगत पृष्ठों में बतलाई जा चुकी हैं। आधुनिक लेखकों के प्रायः सभी निबंध इसी श्रेणी में आयँगे।

यहां पर इस विषय के विशेषज्ञ पं० रामचंद्र शुक्ल की कुछ सम्मतियाँ विस्तार से दी जा रही हैं जिससे प्रस्तुत विषय पर एक प्रामाणिक कथन ही नहीं अवतरित होगा, प्रत्युत पाठक लाभान्वित भी होंगे।

"निबंध या गद्यविधान कई प्रकार के हो सकते हैं—विचारात्मक, भावात्मक, वर्णनात्मक। प्रवीण लेखक इन विधानों का बड़ा सुन्दर मेल भी करते हैं। लक्ष्यभेद से कई प्रकार की शैलियों का व्यवहार भी देखा जाता है जैसे विचारात्मक निबंधों में

व्यास[1] और समास[2] की रीति, भावात्मक निबंधों में धारा[3] तरंग और विक्षेप[4] की रीति। इसी विक्षेप के भीतर वह प्रलाप शैली भी आयगी जिसका बँगला की देखादेखी कुछ दिनों से हिन्दी में भी चलन बढ़ रहा है। शैलियों के अनुसार गुणदोष भी भिन्न भिन्न प्रकार के हो सकते हैं।

धारा और तरंग के योग वाली शैली का चतुर सेन शास्त्री का अंतस्तल अच्छा उदाहरण है। वियोगीहरि का 'अंतर्नाद' तथा 'भावना', रायकृष्णदास की 'साधना' और 'प्रवाल' तथा भँवरमल सिंघी की 'वेदना' की चर्चा के उपरांत शुक्लजी लिखते हैं, "यह तो हुई आध्यात्मिक या सांप्रदायिक क्षेत्र से गृहीत लाक्षणिक भावुकता जो बहुत कुछ अभिनीत या अनुकृत होती है अर्थात् बहुत कम दशाओं में हृदय की स्वाभाविकपद्धति पर चलती है। कुछ भावात्मक प्रबन्ध लौकिक प्रेम को लेकर भी मासिक पत्रों में निकलते हैं जिनमें चित्र-विधान कम और कसक, टीस, वेदना, अधिक रहती है।"

"अतीत के नाना खण्डों में जाकर रमने वाली भावुकता का मनुष्य की प्रकृति में एक विशेष स्थान है। मनुष्य की इस प्रकृतिस्थ भावुकता का अनुभव हम आप भी करते हैं, और दूसरों को भी करते हुए पाते हैं। अतः यह मानव हृदय की एक सामान्य वृत्ति है। बड़े हर्ष की बात है कि अतीत के क्षेत्र में रमाने वाली अत्यंत मार्मिक और चित्रमयी भावना लेकर महाराज कुमार डा० श्री रघुवीर सिंह ( सीता-मऊ, मालवा ) हिन्दी-साहित्य क्षेत्र में आए। उनकी भावना मुग़ल

---

[1]व्यास शैली—थोड़ी सी बात अधिक शब्दों में कहना

[2]समास शैली—पूरी बात—थोड़े से नये तुले शब्दों में कहना

[3]धारा शैली—इसमें हृदय के भावों का उदगार नदी की धारा या प्रवाह के समान होता है।

[4]विक्षेप शैली—किसी बात को रुक रुक कर प्रकट करना।

सम्राटों के कुछ अवशिष्ट चिह्न सामने पाकर प्रत्यभिज्ञा के रूप में मुगल साम्राज्यकाल के कभी मधुर भव्य और जगमगाते दृश्यों के बीच, कभी पतनकाल के विषाद, नैराश्य, और बेबसी की परिस्थितियों के बीच बड़ी तन्मयता के साथ रमी है। ताजमहल, दिल्ली का लाल किला, जहाँगीर और नूरजहाँ की कब्र, इत्यादि पर उनके भावात्मक प्रबंधों की शैली बहुत ही मार्मिक और अनूठी है।"

"गद्य साहित्य में भावात्मक और काव्यात्मक गद्य का भी एक विशेष स्थान है, यह तो माननाही पड़ेगा। अतः उपयुक्त क्षेत्र में उसका आविर्भाव और प्रसार अवश्य प्रसन्नता की बात है। पर दूसरे क्षेत्रों में भी जहाँ गंभीर विचार और व्यापक दृष्टि अपेक्षित है, उसे घसीटे जाते देख दुःख होता है। जो चिन्तन के गूढ़ विषय हैं, उन को भी लेकर कल्पना की क्रीड़ा दिखाना कभी उचित नहीं कहा जा सकता। विचार क्षेत्रों के ऊपर इस भावात्मक और कल्पनात्मक प्रणाली का धावा पहले पहल "काव्य का स्वरूप" बतलाने वाले निबंधों में बंग साहित्य के भीतर हुआ।"

× × × ×

"काव्य पर न जाने कितने ऐसे निबंध लिखे गए जिनमें सिवा इसके कि "कविता अमरावती से गिरती हुई अमृत की धारा है" "कविता हृदय कानन में खिली हुई कुसुममाला है" "कविता देव लोक के संगीत की गूँज है", और कुछ भी न मिलेगा। यह कविता का ठीक ठीक स्वरूप बतलाना है कि उसकी विरुदा-वली बखानना? हमारे यहाँ के पुराने लोगों में भी जहाँ न जाय रवि, वहाँ जाय कवि' ऐसी ऐसी बहुत सी विरुदावलियाँ प्रचलित थीं, पर वे लक्षण या स्वरूप पूछने पर नहीं कही जाती थीं। कविता भावमयी, रसमयी और चित्रमयी होती है इससे यह आवश्यक नहीं कि उसके स्वरूप का निरूपण भी भावमय, रसमय और चित्रमय हो। 'कविता' के ही

निरूपण तक भावात्मक प्रणाली का यह धावा रहता तो भी एक बात थी। कवियों की आलोचना तथा और और विषयों में भी इसका दखल हो रहा है, यह खटके की बात है। इससे हमारे साहित्य में घोर विचार शैथिल्य और बुद्धि का आलस्य फैलने की आशंका है। जिन विषयों के विरूपण में सूक्ष्म और सुव्यवस्थित विचार परंपरा अपेक्षित है उन्हें भी इस हवाई शैली पर हवा बताना कहाँ तक ठीक होगा।

———

# अकारादि क्रम से पुस्तकस्थ लेखक सूची


अंगनलाल शर्मा ७३

अम्बिकादत्त व्यास ११, २६

अम्बिका प्रसाद गुप्त ७६

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ४०

आनंद भिक्षु सरस्वती ५२

इंशा अल्ला खां १५

इलाचंद जोशी ६५

उपेन्द्र शंकर द्विवेदी ७८

उमानेहरू ६८, ६६

कमलाबाई कीवे ६८

काका कालेलकर ६६

कालिदास कपूर ६२

काशीनाथ खत्री २६

किशोरीलाल गोस्वामी २८

किशोरीलाल मश्रुवाला ६६

कृष्ण बलदेव वर्मा ६६

कृष्णानंद पंत ७६

केशवराम भट्ट ११

चंद्रमौलि सुकुल ७३

गणपति जानकीराम दुबे ६५

गणेशप्रसाद ८०

गणेश शंकर विद्यार्थी ६६

गंगाप्रसाद अग्नि होत्री ३०, १०

गंगाप्रसाद अग्रवाल ८१

| | |
|---|---|
| गंगाप्रसाद पांडे | ६५ |
| गंगासहाय शर्मा | ७३ |
| गुलाबराय एम० ए० | ५३, ५४ |
| गोकुलचंद शर्मा | ७२ |
| गोदावरी केतकर | ६८ |
| गोपालचंद्र देव | ७८ |
| गोपालराम गहमरी | ३०, ३७ |
| गोविन्दनारायण मिश्र | ११, २८, ३०, ३८, ४०, ५१ |
| चतुरसेन शास्त्री | १२२ |
| चंदाबाई | ६८, ७६ |
| चंद्रधर शर्मा गुलेरी | ४१, ३० |
| चंद्रावती त्रिपाठी | ६८ |
| चिपलूणकर | ३०, ७० |
| जगदीश झा 'विमल' | ७३ |
| जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी | ४३ |
| जगन्नाथप्रसाद शर्मा | ८० |
| जगमोहन सिंह | २८, २९, ६५ |
| जयशंकर प्रसाद | ४७, ४८, ५०, ६२ |
| जैनेन्द्रकुमार | ६२, ७८ |
| ज्वाला प्रसाद | ११ |
| तुलसीराम | ८१ |
| तारा पांडे | ६८ |
| तोताराम | ११, २८ |
| तोरनदेवी शुक्ल 'लली' | ६८ |
| दयानंद सरस्वती | १३, ४८ |
| दिनेशनंदिनी चोरड्या | ६९ |

द्विजेन्द्रलाल ७८
दुर्गाप्रसाद मिश्र २६
देवशर्मा 'अभय' ६७
द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी ४२, ७२, ७३, ७५
धीरेन्द्र वर्मा ६३, ७३, ७८
नगेन्द्र ६५
नंददुलारे वाजपेयी ६०, ७८
नर्मदेश्वर प्रसाद उपाध्याय २८
पदुमलाल पन्नालाल बख्शी ५७, ५८, ७८
पद्मसिंह शर्मा ४७
पारसनाथ त्रिपाठी ७३, ७६
पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ५६
पूर्णसिंह अध्यापक ४२
प्रतापनारायण मिश्र ६, ११, १६, १८, २२, २३, ३७, ४३, ७६
प्रतापमल नाहटा ८१
प्रभाकर माचवे ६५
प्रभुनारायण ६२
प्रेमचंद ४७, ५०, ५१, ७८
फ्रेडरिक पिन्काट २८
बदरीनारायण चौधरी ११, १८, २६
बदरीप्रसाद जोशी ८१
बनारसीदास चतुर्वेदी ६३
बालकृष्ण भट्ट १६, २२, ४३
बालमुकुंद गुप्त २६, ३०, ३७, ३८
बुद्धिनाथ शर्मा शास्त्री ७३
बेकन २, ३०, ७१

बंकिम बाबू ७०
ब्रह्मदत्त शर्मा ८१
भँवरमल सिन्धी १२२
भीमसेन शर्मा २८, ४८
मंगलानंद गौतम ७३
महादेवी वर्मा ६८
महावीरप्रसाद द्विवेदी ३०, ३५, ७१, ८१
माधवप्रसाद मिश्र ३०, ३६
मैथिलीशरण गुप्त ६०
मोहनलाल महतो ६७
रघुवीरसिंह महाराजकुमार ५३, ८४
रवीन्द्रनाथ ठाकुर ७०, ७८
राजेन्द्रसिंह कुंवर ५६
राजेन्द्रसिंह गौड़ ७४
राधाचरण गोस्वामी २६
रामकुमार वर्मा ६०, ६१, ६४
रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख' ६०, ६२
रामनाथ 'सुमन' ६६
रामचन्द्र वर्मा ७८
रामचन्द्र शुक्ल ६, ११, ३७, ४५, ७७, ८३
रामदास गौड़ ६६
रामदाहिन मिश्र ७३
रामनारायण चतुर्वेदी ७३
रामरतन अध्यापक ७३
रामरतन भटनागर ७२
रामलोचन शरण ७३, ७६

| | |
|---|---|
| रामशंकर शुक्ल 'रसाल' | ६५, ७३ |
| रामेश्वरी देवी गोयल, | ६६ |
| रामेश्वरी नेहरू | ६८ |
| राय कृष्णदास | ५१, ६६, ८४ |
| राहुल सांकृत्यायन | ६५ |
| लक्ष्मणसिंह | १५ |
| लल्लूलाल | १५ |
| वासुदेव शर्मा | ७३ |
| वियोगीहरि | ५१, ५२, ६६, ७६, ८१, ८४ |
| व्रजमोहन वर्मा | ५६ |
| शांतिप्रिय द्विवेदी | ६०, ६३, ८१ |
| शिवप्रसाद (राजा) | १५ |
| शीतलासहाय | ६५ |
| श्यामसुन्दरदास | ५, ४०, ५१, ७८, ७६ |
| श्रद्धाराम फुल्लौरी | १३ |
| श्रीनाथसिंह | ५६ |
| श्रीनिवासदास | ११, २८ |
| सकलनारायण शर्मा | ७६ |
| सत्यदेव स्वामी | ७३, ७५ |
| सदल मिश्र | १५ |
| सदा सुखलाल | १५ |
| सद्‌गुरुशरण अवस्थी | ५६, ७६, ८१ |
| संतराम बी. ए. | ६४ |
| सियारामशरण गुप्त | ६३ |
| सुभद्रा कुमारी चौहान | ६८ |
| सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' | ५२ |

हंसराज भाटिया ६५
हजारीप्रसाद द्विवेदी ६०, ७८
हरिशंकर शर्मा ७९
हरिश्चंद्र, भारतेन्दु, ४६, ६२, १३-१५, १०
हरिश्चंद्र शर्मा उपाध्याय २८
हरिभाऊ उपाध्याय ६६

# अकारादि क्रम से पुस्तकों की सूची

५१,६६,१२२ अंतर्नाद; गांधी हिन्दी पुस्तक भंडार, प्रयाग १६८३
८४ अंतस्तल चतुरसेन शास्त्री
७८ आदर्शनिबंध; उपेंद्रशंकर द्विवेदी; हिन्दी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता
७३ आदर्श निबंध और पत्रलेखन; लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा
१८,२६,२८ आनंदकादंबिनी (पत्रिका)
३३ आलोचनांजलि, इण्डियन प्रेस, प्रयाग १६२८ ई०
८१ उच्छृंखल
५० कलम, तलवार और त्याग
६१ कवि और काव्य; इण्डियन प्रेस, प्रयाग १६३६ ई०
१३ कविवचनसुधा (पत्रिका) काशी २३
४६,६० काव्य और कला तथा अन्य निबंध; भारती भंडार, प्रयाग १६६६ वि०
६५ काव्य कलना
५० कुछ विचार; काशी १६३६ ई०
६५ क्या करें; साम्यवादी पुस्तक प्रकाशन मंदिर दारागंज, प्रयाग १६३६ ई०
७६ गद्यप्रकाश
४३ गद्यमाला; जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी; हिन्दी ट्रांसलेटिंग कम्पनी कलकत्ता १६६६ वि०
४०,५१,७६ गद्यरत्नावली; इण्डियन प्रेस, प्रयाग
७६ गद्य-संग्रह; गयाप्रसाद ऐण्ड सन्स, आगरा

३८ गुप्तनिबंधावली

३८ गोविंद निबंधावली; दामोदरदास खन्ना वाराणसी घोष स्ट्रीट कलकत्ता १९८३ वि०

४६ चिंतामणि ; इण्डियन प्रेस, प्रयाग १९३९ ई०

५१ छायापथ ; भारती भंडार, रामघाट, काशी १९८८ वि०

६० 'जयशंकर प्रसाद' भारती भण्डार, प्रयाग १९४१ ई०

६१ जीवन यात्रा; ग्रन्थमाला कार्यालय, बाँकीपुर

६२ जैनेन्द्र के विचार

६३ झूठसच ; साहित्य सदन चिरगाँव, झाँसी

५१ ठंडे छींटे

५१,८१ तरंगिणी

६७ तरंगित हृदय, सस्ता साहित्य प्रकाशक मंडल, अजमेर १९२६ ई०

४६ 'त्रिवेणी' इण्डियन प्रेस, प्रयाग

५८ नवयुग पाठमाला

७४ निबंधकला, साधना सदन प्रयाग

७८ निबंध कुसुमावली; विद्याभवन हस्पताल रोड, लाहौर

७३ निबंधचंद्रिका; रामप्रसाद ऐण्ड संस, आगरा।

२२ निबंधनवनीत; अभ्युदय प्रेस, प्रयाग।

७३ निबंध-निचय, बुद्धिनाथ शर्मा शास्त्री

४३ निबंधनिचय; जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, लखनऊ १९९० वि०

७२ निबंध प्रबोध; किताबमहल, ज़ीरोरोड, प्रयाग

३०,७१ निबंधमालादर्श; नवलकिशोर प्रेस, प्रयाग

७३ निबंधरचना सुरसरी; लोहिया आदर्स मारक्वीस स्क्वायर, कलकत्ता

६८,७६ निबंधरत्नमाला; चंदाबाई; देवेन्द्र प्रेस मंदिर, आरा

७८ निबंधरत्नावली
७३ निबंध सोपान
७२ निबंधादर्श; साहित्य भवन, प्रयाग।
६५ निबंधिनी; छात्र हितकारी पुस्तकमाला दारागंज प्रयाग
७६ नीतिनिबंध, हिन्दी पुस्तक भंडार, लहेरिया सराय १९३५ ई०
६५ नीर-क्षीर
५१ पगला ; भारती भंडार रामघाट, काशी सं १९९० वि०
५१ पगली
५८ पंचपात्र ; गांधी हिन्दी पुस्तक भंडार, प्रयाग १९८४
४८ पद्मपराग ; प्रयाग सं० १९८६ वि०
७८ परिषद निबंधावली (दो भाग) हिन्दी साहित्य परिषद, प्रयाग १९२९, १९३१ ई०
२२ प्रताप-पीयूष
२२ प्रताप समीक्षा; हिन्दी साहित्य रत्नमंडल, आगरा १९९५ वि०
७३ प्रबंध पथ प्रदर्शक; गंगासहाय शर्मा
५२ प्रबंध पद्म १९९१ वि०
७३,७६ प्रबंध पारिजात ( पारसनाथ त्रिपाठी ) हिन्दी साहित्य प्रचारक कार्यालय नरसिंहपुर १९१८ ई०
५८ प्रबंध पारिजात (बख्शी जी)
७९ प्रबंधपूर्णिमा; हिन्दी ग्रंथ भंडार कर्यालय, बनारस १९७७
५२ प्रबंधप्रतिमा, भारती भंडार, प्रयाग १९९७ वि०
५५,७४ प्रबंधप्रभाकर, हिन्दी भवन अनारकली, लाहौर १९३४ ई०
४८ प्रबंधमंजरी
४२,७२,७५ प्रबंधरचना शैली

७६ प्रबंधरत्नाकर; सकलनारायण शर्मा, बाँकीपुर १९१४ ई०
८१ प्रबंधार्कोदय-कालीचरण, अतरौली अलीगढ़ १८६५ ई०
५१,८४ प्रवाल; भारतीभंडार, रामघाट काशी १९८६ वि०
७० प्राचीन साहित्य; हिन्दी ग्रंथरत्नाकर कार्यालय, बम्बई
४० प्रियप्रवास
८१ फल संचय
७२ बंकिम निबंधावली
१३ बालाबोधिनी (पत्रिका) २३
१८,२२ ब्राह्मण (पत्रिका)
३०,७१ बेकन विचार रत्नावली: वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई १९०१
३७ भारतमित्र (पत्रिका)
४८ भारतोदय (पत्रिका)
५२ भावना; भारतीय ग्रंथमाला, बृंदावन १९२८ ई०
४० भाषाविज्ञान, इन्डियन प्रेस, प्रयाग
४६ भ्रमरगीतसार
८१ मनुष्य विचार; इण्डियन प्रेस, प्रयाग
३६ माधवमिश्र निबंधमाला, द्वारकाप्रसाद शर्मा, प्रयाग १९३१
४८,४९,६१ माधुरी (पत्रिका)
८१ मित्रता कलकत्ता १९८४ वि०
५४ मेरी असफलताएँ; साहित्य रत्न भंडार आगरा।
६९ मौक्तिकमाल
६० युग और साहित्य
७४ रचनाचंद्रोदय हिन्दी पुस्तक भंडार, लहेरियासराय १९२९ ई०
७३ रचना नवनीत
७३ रचनापीयूष; इंडियन प्रेस १९३४
७३ रचना प्रबोध

७३ रचना विकोश
४० रसकलश
३३ रसज्ञरंजन; साहित्य रत्नभंडार, आगरा १९३८ ई०
७० राजा और प्रजा; हिन्दी ग्रंथरत्नाकर कार्यालय बम्बई १९३९
७३ लेखन कला; भागीरथी प्रेस, कनखल १९९७ वि०
३३ लेखांजलि, हिन्दी पुस्तक एजेंसी कलकत्ता १९८५ वि०
७० बंकिम निबंधावली; हिन्दी ग्रंथरत्नाकर कार्यालय बंबई १९२८ ई०
८१ विचार कुसुमांजलि; बदरीप्रसाद जोशी, काशीपुर
६७ विचारधारा; साहित्यनिकेतन, दारागंज, प्रयाग
६३ विचारधारा धीरेन्द्र शर्मा सा० भवन, प्रयाग
३६,३३ विचार विमर्श (द्विवेदी जी म० प्र०), गंगापुस्तकमाला लखनऊ १९८१
६० विचार विमर्श (सद्गुरुशरण अवस्थी)
४६ विचारवीथी
६२ विचार वैभव
७० विचित्र प्रबंध; इण्डियन प्रेस प्रयाग; १९२४ ई०
४८, ६१ विशालभारत (पत्रिका)
५७ विश्वसाहित्य
८४ वेदना
७० शिक्षा; हिन्दी ग्रंथरत्नाकर कार्यालय बंबई; १९२२ ई०
७० शिक्षा कैसी हो
५३ शेषस्मृतियाँ; हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय बंबई १९३९ ई०
६८ शृंखला की कड़ियाँ, साधनासदन, प्रयाग
५१ संलाप
८१ संकलन, भारती भंडार, रामघाट बनारस

६१ संचारिणी
७५ सत्य निबंधावली; प्रयाग, १९७०
५३ सप्तदीप १९३८
७० समाज
४१ समालोचक (पत्रिका)
३३ समालोचना समुच्चय; रामनारायणलाल, कटरा, प्रयाग १९३० ई०
३१,४२,४८,५६ सरस्वती (पत्रिका)
६८ सहेली (पत्रिका)
५१,६६,८४ साधना; भारतीय भंडार लीडर प्रेस, प्रयाग १९९६ वि०
७० साहित्य
५१ साहित्य विहार; १९८३ वि०
५८,७८ साहित्य शिक्षा; हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बंबई १९३९ ई०
३३ साहित्य संदर्भ; लखनऊ १९८५ वि०
५४ साहित्य संदेश पत्रिका
६२ साहित्य समीक्षा
६५ साहित्य सर्जना
३३ साहित्य सीकर; तरुण भारत ग्रंथावली प्रयाग १९८७ वि०
१६ साहित्यसुमन; महादेव भट्ट, अहियापुर प्रयाग १९७५ वि०
६०,७८ साहित्य सुषमा
२८ साहित्य हृदय; नर्मदेश्वर प्रसाद उपाध्याय, प्रयाग
४० साहित्यालोचन, इण्डियन प्रेस प्रयाग
६१ साहित्यिकी; ग्रंथमाला कार्यालय बांकीपुर, १९३८ ई०
६२ सुकवि समीक्षा; हिन्दी भवन लाहौर
३६ सुदर्शन (पत्रिका)

६० सूर संदर्भ
६८ स्त्री दर्पण पत्रिका
६६ स्वतंत्रता की ओर
७० स्वदेश
४६,५०,६२ हंस (पत्रिका)
६१ हमारे साहित्य निर्माता
१३ हरिश्चंद्र चंद्रिका (पत्रिका) २३
४७ हिन्दी, उर्दू हिन्दुस्तानी; हिन्दुस्तानी एकेडमी प्रयाग १६३२ ई०
८० हिन्दी की गद्य शैली का विकास
८१ हिन्दी गद्यगाथा
५८ हिन्दी गद्यमाला
८० हिन्दी गद्य मीमांसा
७६ हिन्दी गद्य विहार
७६ हिन्दी गद्यरत्नावली
७६ हिन्दी गद्यसंग्रह
४०,५१,७८ हिन्दी निबंधमाला (दो भाग); काशी नागरी प्रचारिणी सभा काशी १६७६ वि०
४२,७२,१०५ हिन्दी निबंधशिक्षा
१६,१६ हिन्दी प्रदीप (पत्रिका)
४० हिन्दी भाषा और साहित्य, इण्डियन प्रेस प्रयाग
७३ हिन्दी रचना कौमुदी; बबुरा कोहलवर शाहाबाद १६२६
७३ हिन्दी रचना बोध; ग्रंथ भंडार, लेडी हार्डिङ्ग रोड, बंबई
८० हिन्दी साहित्य का गद्यकाल
८१ हिन्दी साहित्य में निबंध
६० हृदयध्वनि